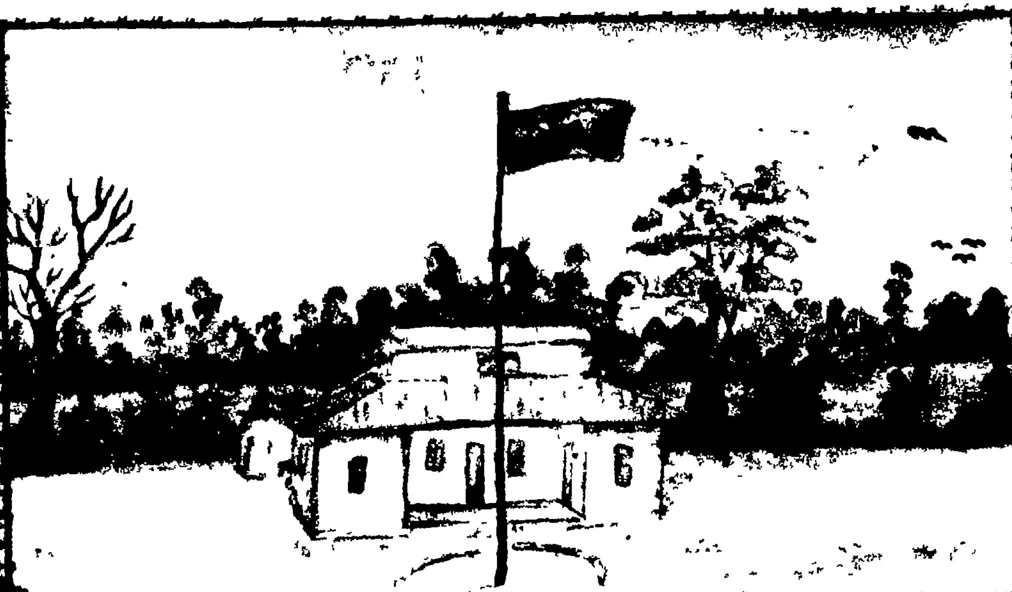
आज कल —



वर्ष .	सम्पादक. कुलमन्त्री. २३ दिसम्बर १९३२.	संख्या २ .

पताका गीत

जिस की चरणधूलि ने पाला जहां किया विद्याध्ययन,
अब प्यारी कुल माता को है मेरा नमस्कार प्रणाम।
वीर पवित्र में रही सी है, माता के पावन सन्देश,
तेरे पुण्य-पताका ले कर फहरा दूंगा देश विदेश।

जागृति —:

हे नाथ, मुझे उस लोक में जाग्रत करो जहाँ मैं सारे संसार के दुःख को अपने ऊपर ले लेने के सुख में मग्न हुआ दिखाई दूँ। निखिल विश्व का ताप जहाँ मेरे रक्त को उष्मा बनाये रखे और अनन्त विश्व वेदना मेरे संगीत की सामग्री बने।

जहाँ एक मात्र तुम्हीं मेरे स्वामी हो, और सब स्वामियों की भावना मुझ में लय होकर तुमसे प्रणय करने की शक्ति दे।

जहाँ भुवन का भुवन मेरा भवन हो, और ससीम जीवन के बदले असीम जीवन पाकर मैं तुम्हारे-साथ नित्य नई क्रीड़ा किया करूँ।

— राय कृष्ण दास.

पं॰ इन्द्रजी विद्यावाचस्पति का सन्देश

भाई!

श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर तुमने मेरे कुछ वि-चार मांगे थे हैं। विचारों की आवश्यकता उनके लिये हो सकती है, जो पूज्य कुलपति जी के बनाये हुए आश्रम से बाहिर हों, क्यों कि वह आश्रम तो कुलपति जी के सब विचारों और संकल्पों का निचोड़ है। स्वामी जी ने अपनी सब आत्मिक और शारीरिक शक्तियां लगाकर गुरुकुल की स्थापना की और उसे बड़ा किया। वह उनके आदर्शों का एक स्तूप था, जो बालक और युवक उस स्तूप में ही निवास करते हैं, उन्हें बाहिर से नहीं, वहीं से आदर्शों का पाठ मिल सकता है। मैं तो प्रायः गुरुकुल की मानसिक यात्रा करके अपने सार्वजनिक जीवन के लिये स्फूर्ति का सन्देश लिया करता हूं। कुलपति जी ने जो कुल बनाया था, उनके उत्तराधिकारियों ने उसके शरीर को बदल देने में कोई कसर उठा नहीं रखी, तो भी यह विश्वास करने को जी नहीं चाहता है कि उस कुल की आत्मा बदल गई है गुरुकुल क्या है आदर्श के लिये सर्वमेध यज्ञ का एक नमूना है। भारत के नव-युवकों के लिये सबसे बड़ा यह सन्देश है। भारत की संकटमय दशा सर्वमेध यज्ञ चाहती है। गुरुकुल उस यज्ञ का जीवित उदाहरण है। कुलपति जी अपने जीवन के आदर्शों को गुरुकुल की कुटिया में बांध कर रख गये हैं प्रत्येक कुल-वासी देश और धर्म के लिये त्याग भावना की-

एक २ पुरुषों उस कुटिया में से जब चाहे तब ले सकता है - उसे बाहर के विचार मांगने की क्या आवश्यकता है।

रामअवतार

:-आज कल-:

:- स्वामी श्रद्धानन्द जी के कार्य ---

आज का दिन भारतीय इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा। आज के दिन एक धर्मान्ध मुसलमान ने अपने धर्म के नाम पर कलंकित होते हुए वीर स्वामी श्रद्धानन्द जी को गोलियों के ऊपर से धर्म की बलिवेदी पर बलिदान कर दिया। [illegible] ने समझा था कि इस काफिर की मृत्यु से मैं मुसलमानों का बड़ा उपकार कर रहा हूं मुसलमानी धर्म के अनुसार [illegible] काफिर का कत्ल करने के लिये मुझे जन्नत मिल जायगा और यह शुद्धि का कार्य करने के लिये अब से कोई [illegible] लेकिन हिन्दू उसकी ये दोनों इच्छायें पूरी न हो सकीं। आततायी को कानून ने उसे समझा दिया कि वह गलती पर थे।

आज अछूतोद्धार और शुद्धि का आन्दोलन दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति कर रहा है। भारतीय राष्ट्रीय महासभा (Indian National Congress) का अछूतोद्धार ही आजकल एक मुख्य कार्य हो गया है कहना क्या है? सब समझने लगे हैं कि

इसके बिना हिन्दू जाति जीती नहीं रह सकती अर्थात् टुकड़े टुकड़े होकर छिन्न भिन्न हो कर अस्तित्व ही एक समय मिट जावेगा। देखते बड़े २ नेता आज एक अछूतोद्धार और शुद्धि के असली अभिप्राय को समझ गये हैं किन्तु इसके चरित्र नायक के जीवन के कार्यों में से उनके मुख्य कार्य यही था। उन्होंने जब देखा कि मुसलमान सब संगठित हो रहे हैं सिक्ख अलग संगठित हो रहे हैं तब हिन्दू जाति एक प्रकार इतना तक छिन्न भिन्न पड़ी हुई मिल सकती है अधिक से अधिक खोये दिये और, और फिर भी उस की निश्चित मृत्यु है। यही सोच कर उन्होंने शुद्धि का कार्य आरम्भ किया और उसे इतनी अच्छी तरह निभाया कि धर्मान्ध धर्म के पाखण्डी मुल्ला मौलवी ने उस के अस्तित्व को ही मिटा देना अपना समझा।

आज तक श्री स्वामी जी का केवल मात्र शुद्धि ही कार्य समझा जाता है किन्तु मैं चेतावनी देता हूं कि यदि स्वामीजी के अन्य कार्यों को भुला कर केवल मात्र शुद्धि ही कार्य क्षेत्र में रखा जायगा तो हम आगे आने वाली जनता के प्रति बड़ा भारी अपराध कर रहे होंगे। श्री स्वामी जी ने केवल मात्र शुद्धि का ही कार्य नहीं किया किन्तु उन्हों

सम्पादकीय

ने वे कार्य कर दिखाये जो शायद किसी भी देश के नेता ने अपने जीवन में नहीं किये होंगे। स्वामी जी उत्कृष्ट तौर पर आर्य समाज के नेता थे इस दिशा में उन्होंने शुद्धि आन्दोलन अछूतोद्धार आदि कितने ही कार्यों में सबसे बड़ा हिस्सा लिया था लेकिन वे हिन्दू पक्षपाती हिन्दू होते हिन्दू जाति का सब संकुचित नेता मानते हैं इनसे नहीं कर सकता हिन्दू संगठन, हिन्दू मुस्लिम एकता, आजादी संग्राम में उपलब्धियों की बड़ी भारी सफलता करना भी इनके जीवन के कार्यों के बड़ा भारी हिस्सा रखते हैं। इन सब के लिये उन्होंने काफी कुर्बानियाँ भी की तथा

जामा मस्जिद की ऊँची वेदी से हिन्दू मुस्लिम एकता का नारा देकर [illegible] २-३ पवित्र आत्मा ही कर सके हैं। इतना ही नहीं उन्होंने देश के लिये भी कम कुर्बानी नहीं की। अत्याचार अंग्रेजों के समय, जब जलियाँवाला बाग के हत्याकाण्ड के बाद सर्वत्र निहत्थी जनता का भय था और राजनीति में भाग लेना सब बड़ा भारी अपराध समझा जाता था इन्होंने ही उसे सफल बनाया और [illegible] की धूम से देश की जनता के हृदय कुछ भी न समझते हुए स्वागताध्यक्ष को स्वीकार किया और उसी दिन समय के सभापति पद से हिन्दी दिया था कि "हिन्दी भाषा ही भारतवर्ष की भाषा है"।

क्या हम इस समय हिन्दूजाति भारत देश सिक्खों और आर्यसमाज की सेनाओं को भुलाकर [illegible] इस बीसवीं का केवल मात्र शुद्धि ही एक मार्ग है बचने का साधन कर सकते हैं? इसका निश्चय? उनके जीवन के समस्त विभागों में चारों दिशाओं में उन्नति दिखाई देती है। यदि लोगों ने केवल इसको शुद्धि में ही सीमित कर दिया तो वे कर सकेंगे कि आगे संतति के लिये वे अनुचित कार्य कर सकेंगे। आगे आने वाली संतति यही समझेगी कि कभी हिन्दू और मुसलमानों में साम्प्रदायिक द्वेष था और उनमें स्वामी श्रद्धानन्द जी हिन्दुओं के नेता होने के लिये मुसलमानों ने उन्हें मरवा दिया। आगे संतति तो स्वतंत्रता और संस्कृति के जानने वालों को याद करेगी। अगर आप चाहते हैं कि भावी इतिहास में स्वामी श्रद्धानन्द जी का नाम अमर रहे तो उन की सभी भावनाओं को समझने का प्रयत्न कीजिये और उनके कार्य क्षेत्र में परिश्रम कीजिये।

बलिदान महोत्सव के अवसर पर ब्रह्मचारियों के प्रति ——

गान्धीजी का सन्देश.

स्वामी जी के बलिदान महोत्सव के दिन हम उन के दलितों के प्रति प्रेम का अनुसरण करें।

सैय्यद महमूदजी का सन्देश.

गुरुकुल के विद्यार्थियों से स्वामी जी को बड़ी भारी आशा थी और वे विद्यार्थी त्याग की मूर्तियां हैं, इसलिये उनको अपनी मातृ भूमि के लिये सर्वस्व त्यागना चाहिए, और स्वतन्त्रता का पथ-प्रदीप बनना चाहिए।

स्वामी जी के कार्य.

पत्र प्रेषक-: राजेन्द्र प्रसाद जी.

अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन के महान कार्यों में दो सब से अधिक महत्त्व रखते हैं और ईश्वर की दया से तथा स्वामी जी की तपस्या के फलस्वरूप दोनों दिन प्रतिदिन उन्नति करते जारहे हैं। जब देश में राष्ट्रीय शिक्षा की ओर ध्यान नहीं था और अंग्रेजी तथा सरकारी मुलाज़मत देने वाली शिक्षा की ओर ही सभी भारतवासी टकटकी लगा रहे थे उन्होंने गुरुकुल की स्थापना करके यह प्रमाणित कर दिया कि सच्ची शिक्षा मातृभाषा द्वारा ही दीजासकती है। और उस का उद्देश्य सरकारी मुलाज़मत नहीं है। गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त शुदे ब्रह्मचारी आज गृहस्थाश्रम में आकर देश में निज की तथा सार्वजनिक काम कर रहे हैं और अपनी योग्यता तथा सच्चरित्रता से अपनी तथा गुरुकुल की ख्याति बढ़ा रहे हैं। दूसरा कार्य दलितोद्धार सम्बन्धी है। इस पुण्य कार्य में उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम दिन एक नवयुवक के उत्साह के साथ लगाये और भारतवर्ष के एक कोने से दूसरे तक भ्रमण करके दलितों के प्रति न्याय करने की शिक्षा और सन्देश पहुंचाया। आज महात्मा गान्धी जी की घोर तपस्या और भीषण प्रतिज्ञा ने इस प्रश्न को एक नवीन महत्त्व प्रदान कर दिया है और स्वामी जी के कार्य की पूर्ति होती दिख रही है। स्वामी जी को श्रद्धाञ्जली देते हुए आज सब को उन के इन दोनों बातों को सीखने और पालने की दृढ़ प्रतिज्ञा करनी चाहिये।

स्वामीजी की अमर आत्मा.

श्रीमती उमा नेहरू जी.

देश में श्रद्धानन्द दिवस मनाया जा रहा है। जब मैं स्वामी जी के जीवन का ख्याल करती हूं - उनके उत्तम विचार, उनके त्याग व सेवा तो ऐसा मालूम देता है कि वह आज दिन भी ज़िन्दा हैं। वो शरीर नहीं, लेकिन सारे भारत में, उनकी सूरत ही सब नज़र आती है।

वह उमड़ती लहरें हरिजनों की, वह मन्दिरों का-खुलना, वह गली गली भगवान की कथाओं का होना, इन कथाओं में हरिजनों का शामिल होना, मन्दिरों में घुस २ कर जाना और हाथ बांध २ कर भगवान के सामने खड़े होकर यह शिकवा करना कि भगवान! क्या आप हमसे रुष्ट हैं, क्या हम तुम्हारे जीव नहीं, क्या हम इतने दरिद्र थे जो तुम हमसे छिपे बैठे थे। आज कितने अरसे बाद तुमने दर्शन दिये।

वह सारे नजारे जब आंखों से गुजरते हैं तो एक बार स्वामी जी की शिक्षा व उपदेश याद आते हैं।

स्वामी जी की सेवा यह यही है कि हरिजनों को इन्सान समझना, उनका सुधार करना, जाति भेद को मिटाने की कोशिश करना, आपस में प्रेम व एकता के भाव पैदा करना और मन में सारी शक्ति को मिला कर, देश सेवा में लग जाना, यही स्वामी जी की सच्ची सेवा है, यही उन का उपदेश और यही उन सब बातों कानों से कह रहे हैं।

सुन्दर लाल जी का सन्देश.

पूज्यपाद स्वामी श्रद्धानन्द जी की पुण्य स्मृति के इस गम्भीर अवसर पर गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को कुछ सन्देश देने की मुझे आज्ञा दी गई है। सन् १९०४ से लेकर अन्त समय तक मेरा और पूज्य स्वामी जी का जो कुछ व्यक्तिगत सम्बन्ध था, वह तो था ही किन्तु उसके अतिरिक्त गतवर्ष गुरुकुल के अध्यापकों और ब्रह्मचारियों के साथ केवल दो दिन के सहवास ने इस कुल की ओर से जो भावनायें मेरे हृदय में उत्पन्न करदी हैं उनके कारण गुरुकुलवासियों का अपने को एक वृद्ध कुलबन्धु मानने और पूज्य स्वामी जी को अपने शेष कुलबन्धुओं के साथ साथ कुलपिता कह कर स्मरण करने में मुझे विशेष गर्व अनुभव हो रहा है। इसलिए ऐसे अवसर पर ब्रह्मचारियों को मेरा सन्देश देना ऐसा ही है जैसा पिता की स्मृति में एक भाई का दूसरे भाई को सन्देश देना।

सन्देश तो क्या मेरी ईश्वर से यह प्रार्थना है कि इस दुखित देश के उद्धार और इसके निस्तार की जो आज हमारे दिवंगत कुलपति

के हृदय में धड़क रही थी वह हममें से हरेक के हृदय में धड़कने लगे। जिस तरह से उन्होंने अपना सारा जीवन, अपना सर्वस्व देश के सामाजिक धार्मिक तथा राजनैतिक सुधार को अर्पित कर दिया था — उसी तरह हम भी कर सकें। भारत से अस्पृश्यता को दूर करना उनके जीवन का एक विशेष उद्देश्य था। महात्मा गांधी के महान् युग ने इस कार्य को अपूर्व स्फूर्ति प्रदान कर दी है। इस स्थिति में हममें से जो कोई देश कुल से निकल कर विवाहित जीवन व्यतीत करने का विचार करे उनको यह प्रण होना चाहिए कि वे पैतृक जातिपाति के बन्धन को तोड़ कर जान-बूझ कर अपनी जन्म की जाति से बाहर गुण कर्म और स्वभाव के अनुसार अपना नाता जोड़ेंगे। जो अविवाहित रहना चाहें वह और उनके उपायों द्वारा इस झूठी जाति पाति को मिटा देने की कोशिशें कर सकते हैं। पूज्य बापू भगवान् गुरुजी के साथ मैं इस बात का विश्वासी हूं कि वर्णभेद में हमारा दायरा केवल हिन्दू कहलाने वालों तक ही परिमित न रहे। हमें ढूंढने पर मुसलमान, ईसाई, और पारसी आदिक कहलाने वालों में भी उत्तम ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र मिल सकते हैं। यदि हम एक सच्चे जिज्ञासु के समान असत्य को त्यागने और सत्य को ग्रहण करने के लिये सदा निष्पक्ष भाव से तैयार रहेंगे तो हमें पता लगेगा कि आधुनिक जाति पाति - सम्प्रदायों और धर्म मज़हबों की इन सब झूठी दीवारों के तोड़ डालने में ही भारत के उद्धार की कुञ्जी है।

सन् १९३० और सन् १९३२ के राष्ट्रीय संग्रामों में गुरुकुल की

नेताओं के सन्देश

ओर से जो थोड़ी बहुत अनुभूतियां यहां हैं और जो कुछ मैंने गुरुकुल को देखा है उससे मुझे पूर्ण विश्वास है कि निकटवर्ती भविष्य में भी इस कुल के बालक मानवजाति और महर्षि इस देश के आन्तरिक सामाजिक तथा राजनैतिक कार्यों को पूरा करने में अपनी सर्व शक्ति से उद्यत होंगे।

Message.

I asked for message on occasion of Swamiji's death anniversary. What better message can I send that ask Gurukul students to complete life work of Swamiji and remove untouchability once for all.

(Dr Syed) Mahmood.

बालपन

मेरे बचपन के कोमलतम -
दिव्य भाव संकल्प मनोरम -
वे चिर संस्कृत आदर्शों की -
मानस मंदिर की प्रतिमायें -
मेरे नयनों के आगे ही -
क्रमशः कांप कांप कर जल में
गलती जाती सलिलांचल में।
मेरे अहंकार की छोटी -
नाव साथ निज पालें मढ़ी -
आज प्रबल जीवन प्रवाह में -
निरुद्देश्य डुलती है इत उत..
यौवन की झंझा से पीड़ित।
कहाँ किनारा, महाप्रलय ! अब
डूबा सब कुछ इस प्लावन में।

क्या यह कहीं लगेगी नौका.
देखो क्या फिर दर्शन होगा ?
इसी चिंतन में रहता हूं -
प्राणों का विप्लव सहता हूं।

× ×. × × ×

(पृष्ट लौटिये)

[illegible]

किसी सृष्टि का बनूं विधाता
नये जगत का महा पितामह।
नव आदर्श नई संस्कृतियां -
आदि 'प्रगति' नई भावना
पथ दर्शक, अग्रेसर जागें -
नये लोक आने वाले का।

मृत्यु से

- मृत्यु से -

i. दूर हुई लिप्सायें सारी -
प्राणों का बन्धन छूटा।
जगी चेतना अमर हृदय में -
मानस का मन्थन छूटा॥

ii. धधक उठी चिन्ता ज्वालायें
जीवन के सूने तट पर।
लाई- किरण निशीथ चेतना
मानवता अंचल पट पर॥

iii. मुक्त हृदय से कहो कहो,
क्या अब अनन्त में खो लूंगी
प्रिय के चरणों पर जीवन की -
निधियां अर्पित कर दूंगी।

ले. 'व्यथित हृदय'

अनुरोध

पावस की संध्या में छाया छाया,
घिर आते गहरे श्यामल-घन —
होती है जब अविरल वृष्टि।
तब दिखलाने को पथ प्रियतम
दो नयनों के उर से अनुपम —
करना विद्युद्दुति की सृष्टि॥

दीखे नहीं पड़ता हो जब मग,
भय विह्वल हों जब इस पग पग —
तब तुम करके दया विशेष।
अमृत बिन्दुओं से अनुरञ्जित,
इस संजीवन-शक्ति-सुसज्जित —
आलोक करना हृदयेश।

ले० श्री राजेश्वर प्रसाद [illegible]

भेंट

i.

गूँथ कर हृदय पुष्प की माल,
पिरोया उसमें प्रेम प्रवाल।
पाद पद्मों पर तेरे लाल,
आज मैं दुखिनी हुई निहाल॥

ii.

बेर शबरी के उनको माल,
सुदामा के था तन्दुल दान।
करो स्वीकार इसे भगवान्,
क्षमा कर अविनीत भक्त का ध्यान॥

ले० श्री बदरीनारायण शुक्ल

मन

किन स्वप्नों के मृदुल नीड में
पाते तुम विश्राम ?
हे मेरे मानस विहग वर !
कहां तुम्हारा धाम !

तमस निशा के प्रति प्रभात को
लोहित वेश हो जात ;
मेरे जीवन का चिर संचित
कहां लुटाते राग ?

चंचल, चपल, तड़ित, द्रुत मारुत
को मार कर मुंह बन्द।
कहां जा रहे हो क्षण क्षण पर
हे मानस मकरन्द !

मेरे अन्तस्तल के बन्दी
उन्मनता की मूर्ति !
उच्छृंखल अणु की के सी
अद्भुत पूर्व स्फूर्ति !

निज रहस्यमय वातावरण को
करो अनावृत, ज्ञात,
जीवन सन्ध्या में होने दो
विकसित विमल प्रभात ॥

श्री शम्भुदयाल सक्सेना

कुलमाता
की
स्मृति में

i.

बीते बहुतेरे साल तेरी पुण्य गोद में ही -
खेल कूद रोज़ रोज धूल ही मचाई है।
धूम भी मचाई, एक नये से नये ही खेल
राजा बन चोर के भी नचाते जमाये हैं।
बाल रवि किरणों ने झुक दूर २ रोती -
तेरे शीश पत्र पर लालिमा चढ़ाई है।
फिर रोज तेरे स्वच्छ जल मे शशांक भी
ध्यान में ही कितनी समाधियां लगाई हैं।

ii.

हम जो उछलते थे, तू भी धूल रूप मे ही
ऊँची सी उछाल मार नीचा दर लाती थी।
कभी जो बहाते अश्रुधारा धूलियों में तेरी -
झट से दुबक एक ओर बैठ जाती थी।
कभी जो हमारी दुखवह्नि जलती सी तुझे,
मुख से निकल एक ओर रोरव पाती थी।

. . . .

(पृष्ठ लौटिये)

२६.

आजकल

खींच लेती, अपने दूर[illegible] देश से ही,
शीतल जल [illegible] साथ प्यास भी बुझाती थी।

(मैं)

प्रात: काल रोज अंशुमाली बाहर प्रसार,
लाल कर जोड़ निज सविता को नवाता है।
सांय काल तेरे से विदाई मांगने को बस
आते वक्त मैं भी सारे हाथ जोड़ जाता है।
चन्द्र ने निशीथ में भी देखने को एकबार
छोटे छोटे तारागण कैसे जगमगाता है।
सारे दिन गर्म आहें भरने को देख माता!
रात मेरा पल २ अश्रु बहाता है।

श्री बलदेव जी

कुलपिता

मुग्ध हृदय में स्नेह भरे तुम
कुलपति क्या फिर आवोगे.
धूल सने कृश तन को मेरे
क्या तुम अंक लगावोगे
मस्त हो रहे विरह में व्याकुल
हो ये काया जीवन से.
विमल नयन तुम तात हमारे
फिर कब आ बन जावोगे.
भर अधीर तन और कलेजा.
हृदय देव तुम को लख कर
पावस प्रेम दिखाने को तुम
कुलपति फिर जब आवोगे,
उस आभा से तब आवेगे
दर्द भरे दुखिया दिल में
प्रेम तुम्हारा उछल पड़ेगा
जब तुम अंक बिठावोगे ॥.

श्री योगेन्द्रनाथजी भाटिया.

— स्वामी श्रद्धानंद जी की विस्तृत दृष्टि —

लेखक—: प्रो॰ सत्यव्रत जी .

मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति बढ़ने की ओर कुछ दूर जा कर ठहर जाने की है। हम लोग भी पहले बढ़ते हैं, पच्चीस या तीस वर्ष तक शरीर पनपता है, परन्तु फिर जा कर ठहर जाता है। जो लोग इस प्रकार ठहर जाते हैं वे साधारण हैं. असाधारण महान् व्यक्तियों में यह नियंम काम नहीं करता। शरीर तो पांच भूतों का है वह तो कभी न कभी ठहर ही जायेगा, परन्तु महान् आत्मा सदा विकास की तरफ ही अपना कदम बढ़ाता जाता है। उच्च आत्मा का यही लक्षण है। स्वामी श्रद्धानन्द विकास में से गुजरते हुये कहीं ठहरे नहीं। उन्होंने अपने जीवन के सम्मुख जो लक्ष्य बनाया उस को पा कर और उसे

आज कल

पीछे छोड़ कर वे और आगे निकल गये। साधारण लोग तो जो कुछ अपने सामने देखते हैं, उसी को अपना लक्ष्य बना लेते हैं और या तो उसे पा नहीं सकते और पा लेते हैं तो उसे पा कर वहीं ठहर जाते हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जिस किसी चीज को देख कर उस को अपना लक्ष्य बनाते वाले नहीं थे। उन का लक्ष्य महान होता था, वे कुछ ऐसे बने हुवे थे कि अपने लक्ष्य को सदा पा भी लेते थे और उसे पा कर उसे पीछे छोड़ कर उस से आगे भी निकल जाते थे और गुरुकुल उन्हीं लक्ष्यों में से एक था। यदि गुरुकुल में ही वे खतम हो जाते तो वे इतने महान न होते। गुरुकुल तो उन के आत्मा के विकास में एक मञ्जिल थी। वे कई स्वप्न लेते थे, उन में से यह भी एक स्वप्न था। वह पूरा हुवा तो वे उसे लेकर चिपटे नहीं बैठे रहे। गुरुकुल का स्वप्न ले कर

उसे पूरा किया और निष्काम भाव से वे उस से आगे निकल गये। आर्य समाज उन के जीवन का बड़ा भारी क्षेत्र रहा था। वे गुरुकुल पार्टी के नेता समझे जाते थे। पार्टियों के आपस के झगड़े बहुत कुछ उन्हीं के पैदा किये हुवे थे, परन्तु उन के आत्मा के विकास में यह एक मञ्जिल थी, समय था जब वे लड़े थे, समय आया जब पुराने लड़ने वाले तो उन्हीं बातों पर लड़ते रहे परन्तु वे

उन लड़ने वालों को मिलाने के लिये उठ खड़े हुवे। अपने अन्तिम दिनों में स्वामी श्रद्धानन्द जी ने पंजाब का दौरा इसी लिये किया था कि हो सके तो कालेज और गुरुकुल पार्टी मिल जाय। छोटे मनुष्य की यही निशानी है कि वह आत्मिक विकास में एक जगह आ कर ठहर जाता है। महान् पुरुष का आत्मा आगे ही आगे विकसित होता चला जाता है। वह सत्य का आविष्कारक

दर्शन करता चला जाता है और आज जिसे वह सत्य समझता है, कल उसे वह अधूरा सत्य समझने लग जाता है और कुछ दिनों बाद वह वहां पहुंच जाता है जहां ये छोटे छोटे सत्य असत्य प्रतीत होने लगते हैं। यह शरीर तो नष्ट हो जायेगा। ऐसा समय आता है जब शरीर उन्नति नहीं कर सकता, परन्तु आत्मा तो अमर है उस की जीवन

यात्रा में यह जीवन तो समुद्र में बिन्दु के समान है। इस लिये यदि आत्मा भी शरीर की तरह खड़ा हो जावे तो वह आत्मा महान नहीं बन सकता। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने जीवन काल में अनेक चोगे बदले। कभी वे धर्म के क्षेत्र में दिखलाई दिये तो कभी सामाजिक आंगन में जा खड़े हुवे। कभी उन्होंने राजनीति को अपनाया

स्वामी श्रद्धानन्द जी की विराट दृष्टि.

तो कभी किसी अन्य योग में मिल पड़े। इसे तुच्छ जीव उन की अस्थिर वृत्ति समझते हैं परन्तु यही उन की महानता का रहस्य है। उन का आत्मा विकास के साथ साथ सत्य का अधिकाधिक दर्शन करता चला जा रहा था इस लिये उन के दृष्टि बिन्दु में ऐसा समय आया जब राजनीति ही धर्म था और धर्म ही राजनीति थी। स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन और उन की महानता को समझने के लिये हमें मानसिक विकास का यह तत्व नहीं भुलाना चाहिये कि विकास में से गुजरता हुआ आत्मा तभी पूर्ण विकास को प्राप्त कर सकता है यदि वह कहीं ठहर न जाये, कहीं उलझ न जाय, सामयिक तथा क्षणिक को निरन्तर तथा सदा का रहने वाला न समझ ले। स्वामी जी का जीवन आत्मिक विकास के इसी नियम का एक जीवित जाग्रत उदाहरण है।

: -सत्य की विजय— :

लेखक -: ब्र. सुरेशचन्द्र जी

आज से बीस शताब्दी पूर्व अन्धकार में एक दिव्य ज्योति चमकी। वह शुभ्र दिव्य ज्योति पहुंचती है गरीब के घर गरीबी मिटाने, रोटी के लिये तरसते हुए भूखे की भूख मिटाने, प्यासे की प्यास बुझाने और कुष्ठ रोग से पीड़ित कोढ़ी की रोग शय्या पर। वह शुभ्र ज्योत्स्ना अपने दिव्य आलोक से इस जगती तल में सत्य अहिंसा को आलोकित कर गई। वह ज्योति, सत्य के मार्ग की मार्ग दर्शक बनी। सच मुच सत्य का मार्ग कांटों से बिछा हुआ है। पग २ पर तीव्र असह्य वेदनाएं होती हैं। बिलकुल सीधे ऊंचे पहाड़ों पर चढ़ना पड़ता है, बड़ी २ खाइयों को पार करना होता है, बड़े २ प्रलोभनों और शत्रुओं का

सामना करना होता है। परमात्मा अपने भक्तों की, सत्य पथ के राहियों की कठिनतम परीक्षाएं लेता है। भक्तों को अपने अस्तित्व को मिटाना पड़ता है, स्वयं का बीज होकर अपने को बलिदान करना पड़ता है। यह सत्य पथ का राही उस परम सत्य का प्रचार करता है, मानव जाति के लिये दीपक बनता है परन्तु उसे भी हाथों, और पैरों पर कीलें गाड़ कर सूली (क्रास) पर चढ़ा दिया जाता है। वह भी अपने खून के कतरों से भरी सत्य की झोली उस दो आकार वाले प्रेममय प्रभु के चरणों में समर्पित करता है। यह भाव कौन पर आरूढ़ है?

एक दूसरी आत्मा इस भूतल पर अवतरित होती है। एक निर्जन वन में एक वृक्ष के नीचे वर्षों तक बैठ, तपस्या कर प्रभु की अमर ज्योति को प्राप्त कर, सत्य, अहिंसा का उपदेश करती है। इसी तरह मानव-जाति के आगे 'अहिंसा परमो धर्मः' की सत्य और सुन्दर सिद्धान्त का प्रचार

करते हुए अपना प्राण त्याग देती है। यह जंगल में एकान्त में बैठ सत्य और अहिंसा का उपदेश करने वाला कौन? यह भगवान बुद्ध थे। इसी प्रकार भारत में एक प्रभु का प्यार पैदा होता है। सच्चे शिव की खोज में अलख नन्दा की चोटी पर जाता है, शेर चीते जंगली जानवरों का मुकाबिला करता है वस्त्र के टुकड़े खाकर क्षुधा को मिटाता है इसी प्रकार सब आपत्तियों को झेलता हुआ, सत्य प्रदीप के प्रकाश से संसार को प्रकाशित करता है, इसको जोध-करवाया जाता है और यह इसी तरह सत्य के लिये अपने प्राण का त्याग करता है और कहता है। ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो, यह प्रभु का प्यारा कौन? दयानन्द।

इन्हीं महापुरुषों की श्रेणी में हम दयानन्द के एक शिष्य को रखते हैं आज भारत की राजधानी दिल्ली में एक मकान के दूसरे मंजिल पर एक सन्यासी-

रोग शय्या पर पड़ा हुआ है। आप-
ने चिकित्सकों के बराबर-
विश्वास दिलाये जाने पर भी
कि आप उनके अच्छे हो जा-
येंगे। वह कहता है कि न
अब यह शरीर ईश्वर की से-
वा के लायक नहीं रहा अ-
ब तो दूसरा चोला धारण
कर ही ईश्वर की सेवा कर
सकूंगा। वह तो दूर दृष्टि-
रखता था। वह जानता देख
रहा था कि आगे क्या होने
वाला है। एक मुसलमान-
आता है जीने पर से ऊपर
चढ़ जाता है। सेवक आकर
उससे पूछता है कौन? मैं
अब्दुल रशीद। सेवक-
क्यों भाई कैसे आये।
अब्दुल रशीद-: धर्म पिपासा
है।

सेवक-: स्वामीजी से डाक्टरों ने
मिलने की मुमानियत कर
रखी है। इतने में स्वामी
जी कुछ सुनाई पड़ा उनने
सेवक के सहज उत्तर स्वामी
ने से उसको आने देने के
लिये कहा। वह अन्दर में
आया और कहा कि मुझे
प्यास लगी है। स्वामी ने
सेवक से कहा कि ~~प्यास~~
~~लगी~~ है पानी पिलादो
सेवक ने पानी दिया।
मगर उसकी प्यास पानी
से कहां बुझने वाली थी
उसको तो खून की प्यास
थी। उसने स्वामी के-
विशाल वक्षस्थल पर
पांच फायर किये।
स्वामी जी इह लीला समा-
प्त हो गई। स्वामी ने

अपने रक्त से भारत को भर कर अपने कातिल की प्यास बुझाई। पर थी आदर्श मृत्यु।

आज दिल्ली में शहीद एक संन्यासी नहीं, नहीं बादशाह की अर्थी का जलूस निकल रहा है। लाखों की संख्या में लोग जमा हैं। आज दिल्ली की सड़कें फूलों से बिछी बिछी हुई हैं। बैण्ड बाजों से उस दिवं-गत आत्मा के मृतदेह का स्वागत कर रहे हैं। बीच में सजे हुए

फूलों से बीदे हुए एक विमान पर उसी संन्यासी का मृतदेह जो अब भी ओजस्वी मालूम होता है पड़ा है। उसकी छाती खु-ली हुई है मानो अब-भी ~~[illegible]~~ बन्दूकों को आह्वान कर रही है। मकानों की छतें मनुष्यों से भरी हुई हैं। स्त्रियें छतों पर से पुष्प बरसा रही हैं कहीं २ पैसे और रुपये भी बरसाये जा रहे हैं पर शान दार बादशाह का जलूस दिल्ली के

इतिहास में अनुपम ही था। दिल्ली के पुराने बादशाह भी अपनी कब्रों में से उचक २ इस बादशाह का जुलूस ~~दिल्ली के इतिहास~~ को हर्षित आंखों से देख रहे थे। देवता भी आकाश में विमान से पुष्प वर्षा कर रहे थे यह देवताओं का विमान इस सन्यासी के स्वागत के लिये नीचे उतरा और सन्यासी को इसमें बिठा कर ऊपर उड़ गया। लोग देखते ही रह गये और आज भी उस स्थान पर लोग उस-

स्थान पर लोग उस सन्यासी के देह को ~~विमान~~ देवताओं से विमान पर ले जाते हुए देख रहे हैं। स्वर्ग में इन्द्र का दरबार लगता है सब देवता एकत्रित होते हैं। वीरवर से टेक उठ कर उस सन्यासी का स्वागत करते हैं इन्द्र अपने आसन को छोड़ उस सन्यासी को उस पर बिठाता है। हर्षध्वनि होती है। नृशंस कातिल अब्दुल रशीद आता है और जार २ रोता है और स्वामी के चरणों में गिर जाता है।

रोते रोते २ उसकी घीघी बंध जाती है। स्वामी कहते हैं पुत्र! इसमें तेरा दोष नहीं कह कर समाधान करता है। सारी सभा में सन्नाटा छा जाता है। कुछ देर बाद हर्ष ध्वनि होती है। आज भक्त जनता के सामने हिंसक शक्तियां नीची हो जाती हैं, लजा जाती हैं। यह सन्यासी कौन? यह देव सभा का सभापति-कौन? यह स्वामी श्रद्धानन्द हैं यही इनका नाम है।

— श्रद्धानन्द यति —

ले० प्रो० लाल चन्द्र जी.

प्यारे स्वामी तेरा स्मरण करना अपना कल्याण करना है। तू कैसा हृष्ट पुष्ट, विशाल काय और शूर वीर था। जब तक तेरा दम में दम रहा व्यायाम नियमपूर्वक करता रहा, स्वास्थ्य के नियमों का भली भांति पालन करता रहा और अपने शरीर को भगवान का मन्दिर समझ कर इसे स्वच्छ और पवित्र रखता रहा। तूने अनेक तप तपे और शरीर को ओजस्वी बनाया। प्यारे स्वामी आज हम तेरे सम्मुख यह संकल्प करते हैं कि हम भी तप तपेंगे, व्यायाम करेंगे, शरीर को मजबूत बनायेंगे और जीवन शूरों की तरह बितायेंगे।

तू निर्भय था। भय भी भयभीत हो कर तेरे पास नहीं फटकता था। शेरों की गरज से तू न घबराया। गोरों और गोरखों की संगीनों और बन्दूकों से तू न घबराया। बला का हौसला था। गज़ब की हिम्मत थी, क्या दिल था, क्या दिलेरी थी। कुछ तो वह बात हम में भी हो तो जीवन का मज़ा आ जाय।

तेरी काया तो विशाल थी ही पर तेरा हृदय कहीं अधिक विशाल था.

आज कल

दीन दुखियों का रोना सुन कर तेरे लिये चैन से बैठना असम्भव हो जाता था। जहां किसी दुखी की पुकार सुनता वहीं पहुंच जाता था। दीनों की सेवा कर के तू अपने चित्त को शान्त करता। कितने अनाथों का तूने हाथ पकड़ा, कितने निस्सहायों का तू सहारा बना, कितने करुण आक्रन्दन करने वालों के तूने आंसू पूंछे।

निष्काम प्रेम तुझ मे था ही पर तूने इसे देश सेवा से बचने का बहाना न बनाया। भारतमाता की तूने खूब सेवा की। ओ सच्चे, पक्के देशभक्त! तू सरकार की आंखों में कांटा बन कर खटकता था (और कौन जानता है कि तेरी मृत्यु, जो एक मुसलमान के हाथों हुई थी उस में पीछे से अंग्रेजों का कितना हाथ था) ओ विजयी वीर! तूने जिस ओर कदम उठाया दुश्मन को दबाया और मज्लूम को बचाया। जहां तू होता था किसी जालिम की हिम्मत न पड़ती थी कि जुल्म कर सके। ओ जालिमों को ठीक करने वाले! तू कहां चला गया। सब ओर देखता हूं पर तेरा सानी नहीं मिलता। तेरे जैसा शील किस में है, तेरे जैसा दिल किस में है, तेरे जैसी शक्ति किस में है, तेरे जैसा क्षात्र तेज कहां है। तू गया तो ये सब भी चले गये।

ओ सत्य के पुजारी, सत्य-धर्म के प्रचारक, सरल दिल वाले, साफ़ २ बात करने वाले, झूठों को अपनी सत्तामात्र से लज्जित करने वाले तू ने जहां झूठ देखा उसे वहीं

आज कल

त्यागा और जब सत्य प्राप्त हुआ तो उस के साथ जोर से चिपट गये। आधा इधर आधा उधर, डांवाडोल, अनिश्चित ऐसा तू कभी न था। जब पाप का जीवन छोड़ा तो हसरत से एक बार भी तो मुड़ कर न देखा। जब छोड़ा तो सदा के लिये छोड़ा उधर से सदा के लिये मुख मोड़ा और कल्याण मार्ग पर पूरी तेजी से दौड़ा इतनी तेजी से दौड़ा कि जन्मों की मञ्जिल वर्षों में तय कर डाली और वीरों की मृत्यु को प्राप्त कर के अपने प्यारे भगवान की गोद में जा आराम लिया।

ओ निराले तपस्वी! तेरी तपस्या का क्या वर्णन करूं। तू तो बड़े ऐश ओ आराम में पला था। तुझे जंगलों में विचरने की क्या सूझी। छोटे छोटे बालकों के साथ घने जंगल में जा घुसा, जा बसा, झोंपड़ियां डाल दीं, डेरा लगा दिया, जंगल साफ किया, जंगल में मंगल बना दिया। गर्मी सही, सर्दी सही, अनेक प्रकार के कष्ट सहे। सच बता स्वामी यह शक्ति तुझे कहां से मिली। हां हां यह शक्ति तुझे कहां से मिली ... .

मेरे इस प्रश्न पूछने पर जाने मुझे क्या हुआ। मेरी आंखों के आगे अंधकार छा गया, बाहर के पट बन्द हुवे और अन्दर के पट खुल गये। देखता क्या हूं प्यारे स्वामी देदीप्यमान, दिव्य वस्त्र धारण किये हुवे मेरे सामने खड़े हैं। पुत्र

एक मिनिट की छुट्टी मिली है। तेरे प्रश्न का उत्तर देता हूं और चलता हूं। मैं चरणों में गिर पड़ा। नीचे गिरे हुवे मुझे यह शब्द सुनाई दिये "पुत्र! शक्ति तो मुझ में भी है और सब कुलपुत्रों मे है पर वह सोई हुई थी। गुरु भक्ति और भगवान की भक्ति से वह जाग पड़ी और मैंने असम्भव को सम्भव कर दिखाया"। जब मैं खड़ा हुवा तो मेरे सामने स्वामी न दीखे और मुझे अनुभव हुवा कि भानी मेरे सिर पर प्रेम से कोई विशाल हाथ फेर रहा है।

श्रद्धानन्द.

लेखक - ब्र. रामनाथ जी.

स्वामी दयानन्द के बाद आर्यसमाज के क्षेत्र में सफल कार्य करने वाला यदि कोई है तो - वह सबसे हैं - वह श्रद्धानन्द हैं। वैसे तो कई नाम गिनाये जा सकते हैं, जिन्होंने इस क्षेत्र में प्रशंसनीय सफलता प्राप्त की है, किन्तु श्रद्धानन्द का कार्य कुछ और ही तरह का है - सचमुच बहुत महत्त्वपूर्ण है। दयानन्द कह गये, सारे भारत को उन्नति के शिखर पर पहुँचाने के लिये आवश्यक है कि प्राचीन भारतीय शिक्षाप्रणाली के अनुसार गुरुकुलों की स्थापना हो, किन्तु इस आदेश को यदि किसी ने समझा - सच्चे हृदय से समझा, तो वह थी स्वामी श्रद्धानन्द की आत्मा। उसने समझ लिया कि जबतक भारतीय उन्नति के विशाल भवन की नींव विद्यार्थियों के दिमागों को न समझा जायगा, तब तक यह भवन कच्चा ही रहेगा - नवयुवकों में, बच्चों में आर्यसमाज के जीवनप्रद सिद्धान्तों का प्रचार कुछ भी फल न लायेगा। यदि विद्यार्थियों के दिमागों में - विदेशीय शासन की प्रबल छाप पड़ जायगी - मन्दिर की भावी ईंटें कच्ची और खोखली हो जावेंगी - तो असम्भव है कभी यह मन्दिर स्थिर भी हो सके। इसीलिये तो तत्कालीन शिक्षणालयों के मुकाबिले में गुरुकुलों का खड़ा होना

आवश्यक था।

आजकल तो इन गुरुकुलों की कमी नहीं है, स्थान २ पर कन्यायें व विद्यार्थी उपयुक्त शिक्षा पा रहे हैं, तथा आवश्यकतानुसार इनका प्रचार बढ़ भी रहा है। किन्तु उस समय में किसी गुरुकुल को स्थापित करने में किन कठिनाइयों का सामना पड़ सकता था, और जैसा कि वीर श्रद्धानन्द को पड़ा, वह किसी से छिपा नहीं है। वर्तमान सब गुरुकुलों का आदि जन्मदाता तो श्रद्धानन्द ही हैं, उसी ने तो इस आदर्श को लोगों के सामने क्रियारूप में रक्खा था। एक मनुष्य के किसी कार्य में सफल हो जाने पर तो फिर बहुतेरे उस कार्य को करने वाले निकल आते हैं। लेकिन प्रारम्भ में हाथ डालना ही कठिन होता है। श्रद्धानन्द ने इसी कार्य का तो नमूना हमारे सामने उपस्थित किया है। दयानन्द यदि विरजानन्द के सच्चे शिष्य थे तो कहने की आवश्यकता नहीं कि श्रद्धानन्द ने दयानन्द के आदेश को निबाहने में कुछ कसर न रक्खी - वह उनके सच्चे शिष्य कहलाने के अधिकारी हैं। दयानन्द की मनोनीत स्कीम को श्रद्धानन्द ने ही पूर्ण किया था।

उसका कार्य यहाँ तक ही सीमित नहीं। जहाँ धार्मिक क्षेत्र में उसने चमत्कार-पूर्ण कार्य किया, वहाँ राजनैतिक क्षेत्र में भी वह हमारा अगुआ है। नि-

सप्रकार गुरुकुल का नाम लेते ही श्रद्धानन्द की मूर्ति सामने आकर खड़ी हो जाती है, उसी प्रकार यदि अछूतोद्धार की ओर जायें तो वहाँ भी श्रद्धानन्द अछूतों के प्रति सहानु-भूति रखने वाले तथा अछूत की स-मस्या को दूर करने के लिये सबसे प्रथम प्रयत्न करने वाले के रूप में हमारे सन्मुख उपस्थित हो जाते हैं। आज अछूत का प्रश्न भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति में प्रबल बाध-क समझा जा रहा है, आज महा-त्मा गांधी इसको हटाने में अपनी पूरी शक्ति लगा रहे हैं, इसी के लिये तो एक समय श्रद्धानन्द के हृ-दय से आवाज़ निकली थी। उसने पुकार कर कहा था, जब तक ये अछूत भाई हमसे आकर नहीं मिल जाते, जब तक हमारी समा-ज के प्रमुख अंग हमसे अलग हैं, उनके प्रति घृणा की दृष्टि से देखा जाता है, तब तक स-म्भव नहीं कि यह जाति अपने गौरव को प्राप्त कर सके।

श्रद्धानन्द की यह स्कीममात्र ही न थी, इसे कार्यरूप में लाकर भी तो उसने दिखाया। न जाने कि-तने बिछुड़े भाइयों को उसने हम-से मिलाया। केवल मनसूबे बांधना तो उसके स्वभाव के ही प्रतिकूल था। जिसके विषय में सोचता था, उसे समाप्त करके ही छोड़ता था। व्याख्यानों के बल से वह नेता न था, वह तो सच्चा नेता था

हिन्दू-मुस्लिम एकता, जिसका न होना आज सबको अखर रहा है, जो कि स्वतन्त्रता आदि में बाधक हो रहा है, के लिये उसने जी जान से प्रयत्न किया। १९२१ के सत्याग्रह आन्दोलन के समय तो उसने जिस उत्साह से कार्य किया उसके लिये राष्ट्र सर्वदा उन्हें स्मरण करता रहेगा। शुद्धि और हिन्दू-मुस्लिम एकता का कार्य वह जिस हृदय से करते थे, एक समय मुसलमान भाइयों ने उसे अच्छी तरह समझ लिया था। किन्तु दुःख तो इस बात का है कि उन्होंने उसे भुला क्यों दिया। उनके हृदय की सत्यता, शुद्धता और निष्पक्षता को न देख कर, उन्हें अपने धर्म की वृद्धि में बाधक समझा। और इसी भ्रम का यह परिणाम हुआ कि उन्होंने एक रत्न को इस लोक से सदा के लिये विदा कर दिया।

वह तो अन्त में भी अपने सच्चे भावों को यहाँ छोड़ गया। आज मुस्लिम भाइयों में भी ऐसे लोग हैं जो श्रद्धानन्द के अभाव और अपने भाइयों के अनुचित व्यवहार को अच्छी तरह अनुभव करते हैं। पूज्य स्वर्गीय श्रद्धानन्द की खूबियों का कौन वर्णन कर सकता है। हमें तो सौभाग्य है कि हमारा उनके साथ अविच्छिन्न सम्बन्ध है। हमें तो यह कहते हुये अभिमान होता है कि वह हमारा कुल पिता था, हम उसके सुपुत्र हैं।

[signature]

स्वामी श्रद्धानन्द जी का कार्य सूत्र

श्री देवराज जी विद्या वाचस्पति

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सन्यास ग्रहण करने से पूर्व गुरुकुल से विदा होते समय कुलवासियों को शुभसन्देश दिया था कि "अब मैं गुरुकुल का क्षेत्र अधिक विस्तृत करूंगा"। गुरुकुल में रहते हुवे अपने उपदेशों में स्वामी जी कहा करते थे कि ब्रह्मचारियों के लिए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना इसलिए और भी कठिन है क्योंकि गृहस्थी लोग ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं करते। गृहस्थी को भी ऋतुकाल में जाने से अतिरिक्त सब अवस्थाओं में ब्रह्मचारी रहना चाहिये। ऋतुकाल से अन्यत्र अभिगमन करने वाले अब्रह्मचारी गृहस्थी प्राजापत्य व्रत को भङ्ग करके कामवासना से अभिभूत होकर यदि सन्तान पैदा करेंगें तो उनकी सन्तानें अपने जीवन-काल में ब्रह्मचर्य

व्रत के पालन को असम्भव कहें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है।

जैसा सफल गुरुकुल-ब्रह्मचर्य-आश्रम वे चाहते थे उसके लिये आवश्यक था कि गुरुकुल में गृहस्थी ब्रह्मचारियों के सन्तान होते जिन्हें तपस्वी जीवन के लिए स्वाभाविक रुचि होती और अत एव जिन्हें किसी ऐसे सामान की आवश्यकता न होती जो तपस्वी जीवन के अनुकूल नहीं है। ऐसे सन्तानों की कमी का अनुभव करते हुवे स्वामी जी के मन में यह विचार चक्कर लगाता रहता था कि देश के साधारण लोगों के मनों में जबतक ब्रह्मचर्य-व्रत के महत्व की भावना प्रबल नहीं की जायगी तबतक गुरुकुल में ब्रह्मचर्य व्रत की अग्नि में देश की सन्तानों को तपा कर उनमें कुन्दन के समान उज्वलता पैदा नहीं की जा सकती।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सन्यास आश्रम में रह कर देश के विभिन्न भागों में और विभिन्न कार्यों में भाग लिया

परन्तु साथ ही साथ देश के नवयुवकों को, बालकों और बूढ़ों को, नर और नारी को ब्रह्मचर्य-व्रत का सन्देश सर्वदा सुनाया। देश के बालक और बूढ़े तथा स्त्रियां एवं युवक विपत्तियों को सहन करने के लिए और आत्म बलिदान के लिए जितने तत्पर हुवे हैं उनको उस तत्परता को बनाने के लिए स्वामी श्रद्धानन्द की चतुर्दिक् फूंकी हुई ब्रह्मचर्य-व्रत की आग ने बड़ा भारी काम किया है। पहिले कोई कुछ भी हो किन्तु जब व्रत पालन के लिए कमर कस लेता है तब वह दिव्यता उसके शरीर से और मन से प्रकट होने लगती है जो सारे जीवन में कभी दिखाई नहीं दी।

स्वामी श्रद्धानन्द शिक्षा की सफलता ब्रह्मचर्य पालन में देखते थे, सच्चा और धार्मिक जीवन ब्रह्मचर्य-व्रत की रक्षा में देखते थे और देश का सच्चा स्वराज्य भी ब्रह्मचर्य में ही देखते थे। काम वासना पर विजय प्राप्त करने के लिए जब मनुष्य

युद्धक्षेत्र में उतरता है तो संकल्प की दृढ़ता के कारण उसमें अद्भुत पवित्र शक्ति उमड़ आती है। वह दीनों, अनाथों और दरिद्रों की रक्षा का कार्य करता है। अबलाओं पर कभी उससे कुदृष्टिपात नहीं होता।

उसका जीवन तपस्वियों का जीवन बनता है। साधारण कष्ट तो उसको कष्ट ही नहीं मालूम होता। यह है सामर्थ्य ब्रह्मचर्य-व्रत में जो स्वामी श्रद्धानन्द जी के सम्पूर्ण कार्य का मूल था॥

:-शहीद श्रद्धानन्द की भावना-:

लेखक-: ब्र॰ सुधाकर जी अ॰ स्नातक

Touch my life
with the magic of thy
fire,
And with its burning
gift of pain make it
gracious,
Use this my body as
a lamp to hold up in
thy temple,
And let its flame burn
in song through the
night and throug
the day,.

आज अमर शहीद श्रद्धानन्द की पुण्यस्मृति में हम उस वीर की अमर भावना की ज्योति को अपने हृदय-मन्दिर में जगमगाती देखना चाहते हैं। उस वीर ने अपने को देश के लिए, जाति के लिए, धर्म के लिए बलिदान कर दिया था। उस की बलिदान की भावना को आज हम हृदय में धारण करें। बलिदान से जीवन खिल जाता है। उनके लिये बलिदान सूखा स्वार्थत्याग नहीं था अपितु सच्चिदानन्दमय

आत्मसाक्षात्कार था। वस्तुतः बलिदान की भावना बड़ी बहुमूल्य है। बलिदान का तात्पर्य अपनी शक्ति का बलिदान नहीं है अपितु आत्मसमर्पण है। देश सेवा के लिए आत्मसमर्पण करना भी बलिदान है। देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में बलिदान की भावना से ओत-प्रोत देशसेवक सैनिकों की आवश्यकता है। 'मुझे इस काम में मरना है यदि ईश्वर की इच्छा होगी तो वह मुझे यश देकर उससे बचा लेगा' इस भावना के सैनिकों की आवश्यकता है।

दीन, पतित और पथभ्रष्ट लोगों के लिए उस वीर ने महान त्याग और अपूर्व प्रेम का जीवन बिताया था। उसका प्रेम और त्याग का आदर्श जाति और सम्प्रदायों की चहारदिवारी को पार कर गया था। वस्तुतः बलिदान की भावना का स्रोत त्याग, सेवा, प्रेम और निरभिमान की भावना ही है। अपनी स्वार्थवृत्ति का त्याग और परार्थवृत्ति का ग्रहण ही मनुष्य को बलिदान का पाठ पढ़ाता है। दूसरों को अपना समझना, उनकी सेवा करना, उनके लिये अपने को समर्पित कर देना बलिदान का गुरुमन्त्र

है। 'वन्देमातरम्' बलिदान का मूलमन्त्र है। माता की वन्दना उसके पुत्रों- अपने भाइयों की सेवा में ही है। माता कहती है तुम मुझे अनेक नामों से पुकारते हो पर मुझे तो 'माता' यही नाम प्रिय है क्योंकि माता शब्द में मेरे बालकों का समावेश है। 'वन्देमातरम्' उस शब्द में जितनी मातृ-भक्ति है उतना ही भ्रातृप्रेम है भगिनीप्रेम है। अपने भाइयों की सेवा ही परम धर्म है। उस प्रेम सौहार्द का अन्त उन अछूत कहे जाने वाले भाइयों की सेवा करते हुवे ही हुवा था। अन्त्यजों की सेवा ही आज अत्यन्त आवश्यक है। भारत की पवित्र भूमि में अन्त्यजों की सत्ता एक महान कलङ्क है। अन्त्यजों की सेवा समानता की भावना से होगी। अपने से अलग समझने की वृत्ति ने ही हमारे हृदयों को मनों को कलुषित कर दिया है। उसको मिटाइये समानता की भावना को अपने दिलों में भरिये। अन्त्यजों की सेवा अभिमान के बड़प्पन के भाव से नहीं होगी अपितु नम्रता

प्रेम और समानता के भाव
से होगी। हम को उन की
आत्मा में समा जाना होगा।
उनके हृदयों को अपने
हृदयों से मिलाना होगा।
हम को अपने ज्ञान का अपने
धन का उन निस्सहाय
गरीब अल्पज्ञों व किसानों
तक प्रसार करना होगा।
वे समाज के अंधेरे तह-
खाने में पड़े हैं। वहां
ज्ञान का, सहानुभूति का,
प्रेम का उजेला बहुत कम
पहुंचता है। उन को अपनाना
होगा। उनके दिलों से भेद-
भाव के परायेपन के तथा
कमजोरी के सपने को,

शुद्ध अछूत समझने के
भाव को हटाना होगा।
अछूत और गांव के किसान
वे हैं जिन को हम अशिक्षित
कहते हैं। जिन्हें हम गवांर
किसान समझते हैं पोथी
के पन्नों का पर्दा भेद कर
उन तक हमारी दृष्टि नहीं
जाती। वे हमारे लिये अस्पृ-
श्य हैं। इसीलिए वे हमसे
अलग होकर स्वभावतः ही
भिन्न हो जाते हैं। समाज का
चिरबाधाग्रस्त जो नीचे
का अंश है जहां कहीं
भी सूर्य का प्रकाश पूर्ण-
रूप से नहीं पहुंचाया
जा सकता वहां कम से

कम तेल की बत्ती जलाने के लिये तो हम को तय्यार रहना चाहिये।

उस अद्वितीय कुलपति ने कुलपुत्रों को आत्मा के अमरपन का सन्देश दिया था। उसकी स्मृति कुलपुत्रों को सच्चे आत्मिक वीर बनने को प्रोत्साहित किया करती है। आत्मा के गुण हैं— साहस, धैर्य, अटूट विश्वास और सत्यप्रेम। जीवन संग्राम आत्मगुणी लोगों के लिए ही है। यहां साहस करना है विश्व के महान कार्यों में प्रवृत्त होने के लिये। यहां अटूट धैर्य धारण करना है प्राणा-न्तक आपत्तियों का स्वागत करने के लिये। यहां दृढ़ विश्वास रखना है अपनी सम्पूर्ण दैवी क्षमताओं पर। जीवन संग्राम में हम को दीपक की भांति सत्य को पकड़े रखना है। सत्य का प्रेमी वही है जो सत्य के लिये अपने को खुशी २ न्योछावर करदे। वह सत्य का प्रेमी नहीं, सत्याग्रही नहीं जो सत्य की रक्षा के लिए अपने को असमर्थ पाता हो। कुलपति की वीर भावना उसके वीरपुत्रों

के ध्वजों को सदा ऊंचा उठाये रखती थी। आज हमें भी उसी भावना को भरना है। आज भी वह अमरत्व की भावना हम को बार २ सुना २ कर कह रही है कि 'तुम उतने ही जवान हो जितनी तुममें श्रद्धा है। उतने ही बूढ़े हो जितने तुम शङ्काशील हो।

तुम उतने ही यौवनसम्पन्न हो जितने तुम आत्मविश्वासी हो। उतने ही वृद्ध हो जितने उरपोक हो। उतने ही जिन्दादिल हो जितने आशावादी हो। उतने ही मुर्दे हो जितने निराशा भरे हो'॥

:- कुलपति के जीवन की कुछ झांकियाँ -

लेखक ब्र० प्रभाकर जी.

इस समय कुछ लोगों के दिलों में ऐसा लगी उ- होने लगा कि अपनी प्राचीन संस्कृति का पुनरुद्धार करना चाहिये. लोग पाश्चात्य संस्कृति को अपनाते हुए बहुत आगे में जा चुके हैं. आज दुनियाँ की प्राचीन संस्कृति किताबों में ही रह गयी है. कोई उसका उद्धार करने- वाले का भी नाम नहीं लेता है. सब यही कहते हैं कि ज़माना बदल गया है. अब तो बीसवीं सदी है. विज्ञान

का युग है. इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर [illegible] [illegible] की ओर [illegible] [illegible] १८४ की है. उस [illegible] को न [illegible] [illegible]. प्राचीन संस्कृति का उद्धार करने के लिये D.A.V. कालेज का उद्घाटन करते हुए इसमें से ही एक बालक [illegible] [illegible] है कि इन्होंने [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हैं उस [illegible] को [illegible] [illegible] [illegible] ऋषियों की संस्कृति को पुन- र्जीवित करना चाहते हैं.

पागल प्रतिज्ञा करता है
कि तीस हजार रुपये चाहिये,
न मिलेंगे, खोजता रहूंगा,
भूखा रहूंगा, घर घर भट-
कूंगा. काश पैसे नहीं हैं,
न उसकी रोजगार, न उसकी
नौकरी. यह पागल प्रतीक
मुसलमान है. यह 'मनुष्य'
के जीवन की पुकार करता है

* * *

एक भिखारी हाथ
में झोली लिये हुए पुकार-
ता की एक रोटी की
उम्मीद में गली गली
जाता है. दुकानदार से
कहता है कि मेरी झोली
मैं भिक्षा दो, मैं भूखा हूं.
सारे शहर में इस पुर
के सभी भिखारी की भूख
मांग आती है. लोग कहते हैं
पागल है, दीवाना है. भिखा-
री अपनी जीवन के नाटक
भरता जाता है. यह इन्सान
भिखा मांगता है. भिखारी
भगवान की भिक्षा की आदर
नहीं करता है. उसकी
मानी मर जाता है. दुनिया
कहते हैं, जिनके भिखारी है
उनके अपनी स्थान है. यह
भिखारी है मुसलमान. यह
है भिखारी के पेट में भूख
भरती की रोटी मांगी

हरद्वार के प्रमुख तीर्थों
में लोग दूर से आकर
अपने मनोरथ सिद्ध करते
हैं. परमपावनी भागीरथी
के किनारे आकर यहाँ
[illegible]
[illegible] को प्राप्त करते हैं.
एक मान्यता भी [illegible]
के इन पुण्य तीर्थों के [illegible]
हो. इसके अतिरिक्त भागी-
रथी का [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] के [illegible]
[illegible] ही [illegible]
[illegible]
[illegible] हैं [illegible]

निकट हिमालय पहाड़ों की
कन्दराओं से प्रवाहित
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
है. [illegible] १०, १५ [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

के लाल इस प्रकार
नागे मंडल के नीचे और
पश्चिम आग्नेय मंडल में इस
काली की आदमकद में
मूर्ति नहीं लगाई हैं. काली
उसकी पूरी प्रकार से देख-
भाल करता है. काली के
अर्धांग में अर्धांग बीच
बन में पिंजरा पशुओं की
हुंकार होती थी, वहां छोटे
बच्चों के बंदनमान की
मधुर ध्वनि उठने लगी
है. वन देवता अपने अन्य
सहयोगियों के साथ काली
के इस उद्योग की सरा-
हना प्रशंसा करते हैं.

और उनके मनोरथ सिद्धि
की कामना करते हैं. काली
ने कोई पश्चिम ग्राम के
निकट पेड़ पर खेलते हुए
एक अंगूर किशमिश की
उन्नत वाटिकाओं में प्रकार
करते हुए बड़े हर्ष लाते हैं
उनके उत्पादन पूरा कर
हुए हुए देवताओं में केली
हो. जो भी इस गांवों की
नजर झुंझुर है वह ही
इस बस्ती की ओर तथा
उसके काली की ओर खिंचा
जाता है. यह काली है
कौन? यह है वह कमल
किशोरी - बरबट का गठन

वाला, शहंशाह महान [illegible]. [illegible] की जीवन की यह तीसरी झांकी है.

* * *

आज जुम्मा मसजिद में [illegible] की तादाद में नमाज़ अदा कर रहे हैं. जिस तख्त पर बैठ कर शाहजहाँ [illegible] उस तख्त पर आज एक [illegible] बैठा हुआ है. लोग [illegible] रहे हैं और उनके [illegible] कर रहे हैं. यह एकता का पुजारी

लोगों को पत्थर दिल का [illegible] है. [illegible] का [illegible] नहीं है. यह है कि यह हिंदु-मुस्लिम [illegible] का [illegible] वाला है. यह [illegible] है. [illegible] है. यह [illegible] विशाल [illegible] अब्दुल [illegible] भी है. [illegible] भी है. [illegible] हिंदु-मुस्लिम ऐक्य के [illegible] है. [illegible]!! यह है विशाल

हृदय भगवान की जीवन की झाँकी मिलती.

卐 卐 卐

मदन मोहन जी उन अनुयायियों पर जिन पर कि गुरु सहकारिता से प्रभाव करते हैं पर उन पर एक ईसाई लेखक नहीं चल सकता है. वहां आज भारत के हिन्दू नेताओं का अवतार लिया है. मालवीय जी इतनी कठिनाइयों में महामना मालवीय जी के सम्बन्ध होकर कहते हैं कि हे मालवीय जी! आप आप बड़े आदमी हैं. हमारे सम्बन्ध सहानुभूति रखते हैं. परन्तु आप हमारे धर्मों पर ध्यान तो नहीं पर सकते हमारे कामों पर यही अपने वाले लोगों अर्थात् ईसाई ही हैं. ईसाइयों का यह उपकार क्यों? यह व्यक्ति स्वीकार करते होगा, उनका उपकार और उनके भाइयों में अपने आंसू मिलाते ना है. उनके साथ उन पर करता है और उनकी सही राह बताता है. यह है ईसाइयों के मानवता अईश अनुयायियों की जीवन की झांकी ओली.

卐 卐 卐

आज दिल्ली वाली
दिल्ली जान-छोड़कर के चली
जा रही थी ... हजारों
बादशाह तख्त नशीन हुए
और जिनके नाम नहीं
नहीं [illegible] के बाद कि
कहे उसी दिल्ली में एक
फकीर की आवाज निकल रहा
है फकीर की लोग सुनते
नहीं [illegible] हुआ है [illegible] नहीं
है और उनके पीछे पीछे
[illegible] [illegible] कि [illegible] और...
रहे हैं [illegible] [illegible] की
के [illegible] [illegible] है [illegible]
की [illegible] आज [illegible] आती।
है [illegible] [illegible] [illegible] सरमद।

यह सुनी है दुनिया की
[illegible] में [illegible] हो चुकी है
परन्तु आज भी उस दुकानदार
फकीर की आवाज गूंजती
रह रही है [illegible] की
[illegible] को [illegible] की तरह [illegible]
[illegible] अपना [illegible] [illegible],
खून के घूंट पिया कर रहे
वीर शहीद [illegible] के
[illegible] की [illegible] आती

* * *

आज उस दुकानदार की
आवाज का सिलसिला जब
इतिहासों का पन्ना है
([illegible])

आत्म निरीक्षण

लेखक-: ब्र. वीरसेन जी.

पिछली बार दीपावलि के उत्सव पर आत्म निरीक्षण नामक एक लेख में हमने आश्रम के पाठकों के सम्मुख वर्तमान गुरुकुलीय जीवन की आलोचना करने की कुछ ढिठाई की थी। आज कुल पिता श्रद्धानन्द की जयन्ती मनाते समय मेरी इच्छा है कि उसी पम्फलेट में मैं कुछ विचार पाठकों के सामने रक्खूं।

पिछली बार गुरुकुलीय जीवन की शिथिलता और असन्तोष का कारण बताते हुए मैंने लिखा था कि गुरुकुल के सम्मुख कोई क्रियात्मिक कार्य क्रम नहीं है। किसी ऐसे आदर्श को, जिसकी महानता और उपयोगिता हमारे जीवन में प्रतिक्षण स्फूर्ति देती है, सम्मुख रखे बिना कोई भी संस्था उन्नतिशील नहीं हो सकती। यह ठीक है कि गुरुकुल की नियमावलि में इस प्रकार के ऊंचे उद्देश्य रखे गये हैं। पर जबतक किसी संस्था के संचालकों और नीतिनिर्धारकों को उसके उद्देश्यों का कोई स्पष्ट समझ में आने लायक बोध न हो उनकी

पूर्ति के लिये कोई कार्यक्रम
नहीं बन सकता और ऐसी
अवस्थाओं में उनका विचार
हमें कोई स्फूर्ति नहीं दे
सकता है।

गुरुकुल के संचालकों ने
उस तरफ बड़ी उपेक्षा का
भाव दिखाया है। जैसे २
दिल लुभाने वाले आदर्शों की
जिनका उन्हें ज्ञान भी कायम
नहीं था उन्होंने स्थापना
तो कर दी पर उन्हें समझने
का कभी प्रयत्न नहीं किया।
उसकी बागडोर प्रारम्भ से
ही ऐसे समूह के हाथ में
पकड़ा दी गई जो कभी इस
लायक हो ही नहीं सकती,
कि उन आदर्शों को भलि भांति
समझ सके। वास्तव स्व-
भावतः यही हुआ था कि
सब उपयुक्त साधनों और
अवसरों के होते हुए भी गुरु-
कुल वह अभिलषित फल
पैदा न कर सका जिसकी
उससे आशा की जा सकती
थी। वर्तमान विदेशी शि-
क्षा प्रणाली के विषैले प्र-
भाव से जाति को मुक्त कर
दे। मातृभाषा में स्वतन्त्र
शिक्षा देना तथा राष्ट्र के
सामने स्वावलम्बन और
आत्मविश्वास का आदर्श
रखना तथा प्राचीन
भारतीय संस्कृति के

पुनरुद्धार की उच्चतम भावना-
ओं से प्रेरित होकर ही इस
शिक्षालय की स्थापना की गई
थी। भारत की पुनः जागृति
और नवयुग के प्रवर्तकों में
सबसे प्रमुख व्यक्तित्व
वास्तविक भारतीय भावना-
ओं और आदर्शों से प्रेरित
सबसे पहले और सच्चे राष्ट्री-
य नेता महर्षि स्वामी दयानन्द
सरस्वती के मानसपुत्र हमारे
कुल पिता महात्मा मुंशीराम
एक भयंकर व आदर्शवादी
थे। उनकी राष्ट्रीय मौलिक-
ता आदर्शों की ऊंची उड़ान
अनुपम साहस और अद्भुत

आत्म विश्वास आज भी भार-
त के राष्ट्रीय नेताओं की
स्पर्धा के विषय हैं। इसी
महापुरुष की गम्भीर भावना-
ओं से प्रसूत यह छोटी
सी पाठशाला समस्त भारत
की आशा और महत्वाकांक्षा-
ओं का केन्द्र थी। इसे स्था-
पित तो पंजाब की आर्य-
समाज, जो कि उस समय
भारत के सामाजिक जीव-
न की एक मात्र स्फूर्ति-
दायिनी संस्था थी ने
किया था पर यह केवल
आकांक्षा सी ही संस्था

न भी यह हिन्दुजाति की
भी संस्था न थी; बल्कि
इससे सीधे तौर पर हिन्दू
ही संबद्ध थे वह भी सारे
भारत की हिन्दू, मुसलमान
सिक्ख, पारसी और —
ईसाइयों की एक मात्र संस्था
उनकी आशाओं का केन्द्र —
पद्दलित भारत की आत्मा-
ने, जो कि बड़े दिनों से —
निरन्तर असफलता और
पराभव से अपने आप में
विश्वास करना ही छोड़ चुकी
थी, जिसे उसने गौरवमय
अतीत की कहानी एक
कल्पना, एक स्वप्न, एक पौरा-
णिक कहानी से अधिक

कुछ भी प्रतीत न होती थी,
जिसे अपनी अतुल शक्ति
पर विश्वास करना स्वयं किसी
बात का आरम्भ कर सकना
मानो आता ही न था। हिमा-
लय की तलहटी में पतितपाव-
नी गंगा की प्राचीन धारा के
तट पर एक घने जंगल में भ-
यानक हिंसजन्तुओं से घिरी
उन दो चार टूटी फूटी झोंपड़ि-
यों में जलती हुई दीपों में
आशा की एक हल्की रेखा का
आभास किया था। हजारों व-
र्षों से आती हुई उस प्राचीन
वैदिक ऋषियों की ज्ञानवाणी
की प्रतिध्वनि प्रतिध्वनि उप-

छोटे २ बच्चों की तुतलाती हुई— कोमल भावपूर्ण सुरीली— कण्ठ ध्वनि में सुनकर उसे अपने पर फिर कुछ भरोसा होने लगा। उन कुटियों की स्थापना भारत की नवीन जागृति के इतिहास में एक क्रान्तिकारिणी घटना थी। ब्रिटिश साम्राज्य भी एकबार इससे चौंक पड़ा था। राष्ट्रीय शिक्षा की स्थापना में आत्मबल के इस कमाल के साहस, कल्पना की उड़ान और आशीर्वाद ने अपना पूरा चमत्कार दिखाया —

सचमुच गुरुकुल यदि उनके आप में अपने संस्थापक की भावना को जागृत कर रख सकता तो गुरुकुलीय जीवन में यह असन्तोष और असफलता न होती। पर गुरुकुल का प्रबन्ध जिन लोगों के हाथ में रहा है वे महात्मा मुंशीराम की उन्नत भावनाओं और उड़ानों का अनुगमन न कर सकते थे। महात्मा मुंशीराम की भावनाएं उन लोगों की सारी उड़ानों से परे की चीज़ थी। वे लोग थे पंजाब के वकील

प्रचार अथवा साधारण स्थिति में व्यक्ति किसान आदि/वे किसी नेता का अनुगमन कर सकते हैं पर गुरुकुल जैसी क्रान्तिकारी संस्था को चलाना उनकी ताकत के बाहर की बात है। यही कारण है कि इन 31 वर्षों में गुरुकुल-राष्ट्रीय शिक्षा की कोई स्वतन्त्र प्रणाली विकसित न कर सका। गुरुकुल का पहला कदम जितने साहस और उत्साह से उठाया गया था अगले कदम उस उत्साह को कायम न रख सके। महात्मा मुंशीराम के उत्तर-धिकारी उनकी ऊँची उड़ानों को समझ ही न सकते थे वे साम्प्रदायिक संकीर्णता और दुनियादारीपन से रंगे थे। उन्हें रुपये को ब्याज पर जोड़ने का ख्याल था पर संस्था की वास्तविक उन्नति की तरफ उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया। रुपया गुरुकुल के जानते थे पर उसका सदुपयोग करना उन्हें आता ही न था। फलतः गुरुकुल के कलेवर की खूब वृद्धि हुई पर राष्ट्रीय शिक्षा की उन्नति न की जा सकी। उनके विद्यावमान

और विभागों की संचालिका
ने उस कार्य को करने के लिये
उत्साह से भरे हुए कार्यकर्ता-
मंडल को, जो महात्मा मुंशी-
राम ने अपने चारों तरफ से
ऊंचे आदर्श से जुटा लिया
था, निरुत्साह कर दिया।
आदर्शवादिता की जगह-
भौतिक समृद्धि ने ली।
नये परीक्षण बन्द कर दिये
गये। जिस कार्य में गर्व
की सदा भावना होती रही-
रहा वह बन्द कर दिया गया
क्योंकि उसका स्वावलम्बि
था। गुरुकुल में आदर्शवादिता
जो ऐसी संस्थाओं की प्र-

रक शक्ति थी निकल गई के-
वल उसका ढांचा अब तक
चला आता है। हर बात में
परिमापन की शक्ति किसी
भी संस्था को उन्नति की ओर
नहीं ले जा सकती। वस्तुतः
देखा जाय तो गुरुकुल के पास
जितने साधन मौजूद हैं उन-
की [illegible] यहां नज़र नहीं
आती। कमीशनों की प्रवृत्ति
यहां बढ़ रही है पर इनकी
अपेक्षा यदि गुरुकुल में कुछ
मौलिक परिवर्तन किये जाते
तो अधिक अच्छा होता।
वेश में पाजामा हो या धो-
ती, व्यवहार में भिक्षु सिस्टम
(Hikshu System) हो या

दाता। इन सब बातों की अपे-
क्षा यदि कुलवासियों का ध्या-
न यहां के उपाध्याय व अध्याप-
कगण को अधिकाधिक यो-
ग्य बनाने की ओर होता
तो शायद यह असन्तोष
की भावना तथा गुरुकुल
के सरकार से मिला देने के
आन्दोलन अपने आप शान्त
हो जाते। यहां के पुस्तकालय
को इस लायक बनाया जाता
कि प्राच्य संस्कृति विषय-
क गवेषणाएं की जा सकें
तो शायद आज गुरुकुल की
बहुत सी समस्याएं हल
हो जातीं। आज छोटे २
कालिजों के पास भी —

उत्तमोत्तम पुस्तकालय मौ-
जूद हैं। लाहौर डी.ए.वी.
कालेज के पास प्राच्य पुस्त-
कों की हस्तलिखित पुस्त-
कों का एक अच्छा खासा
संग्रह है। उनके पुस्तकाल-
य में बैठकर प्राचीन भारत
सम्बन्धी बहुत सी खोजें बड़ी
आसानी से की जा सकती हैं
और की जाती हैं। वहां
संस्कृत के तुलनात्मक अध्ययन
का अच्छा प्रबन्ध
है। इसी प्रकार अन्य वि-
द्यापीठों में भी इस तरह
के प्रयत्न लगातार किये जाते
हैं इसके विपरीत, गुरुकुल
में, जो कि प्राच्य संस्कृति

और संस्कृत शिक्षा के लिये ही अपने आप को सीमित बताता है। इन बातों का सर्वथा अभाव है। यहां प्राचीन भारतीय साहित्य-संस्कृति, इतिहास आदि विषयक खोज के लिये कोई साधन मौजूद नहीं। यहां के अध्यापक बाहर के अन्वेषकों से परिचित होना चाहें तो यह भी यहां असम्भव है क्योंकि इस प्रकार के पत्र-पत्रिकाओं के मंगाने की तरफ यहां ध्यान ही नहीं दिया जाता।

बड़ी२ इमारतों के बनाने में और ऐसे ही कई फ़िज़ूल के कामों में हज़ारों रुपया लगाया जाता है। पर विश्वविद्यालय की वास्तविक शान इन बातों में नहीं है कि उसकी इमारतें बड़ी२ हैं इसके पास सुन्दर२ बगीचे हैं; उसकी सम्पत्ति इतनी है। पर उसकी शान इस बात में है कि उसके अध्यापक बड़े योग्य हैं, उसके पास पुस्तकों का अच्छा संग्रह है उसके विद्यार्थियों की योग्यता बहुत अधिक है। पर खेद है कि इन चीज़ों की तरफ़ यहां बिल्कुल

ध्यान नहीं दिया जाता। गुरु-
कुल पुस्तकालय पर साल में -
सिर्फ 500) ही खर्चे जाते हैं,
जिनमें अखबार भी सम्मि-
लित हैं। पुस्तकालय में
हस्त लिखित ग्रन्थों का तो -
अभाव ही है। गुरुकुल के पह-
ले लोगों ने कुछ अत्यन्त उ-
पयोगी और अलभ्य पुस्त-
कों का संग्रह किया था -
पर इस समय किसी किसी
की ओर ध्यान न होने से अधि-
कांश को कीड़े खा गये हैं,
यद्यपि अब उनकी संभाल
होने लगी है।

इस प्रकार कार्यकर्त्ता-
ओं में आदर्शवाद न रहने
से तथा गुरुकुल के -
अव्यावहारिक महत्ता की तरफ
लापरवाही होने से आज
हम देखते हैं विद्यार्थियों के
जीवन में भी अकर्मण्यता
घर करती जाती है। साथ
ही कुछ वर्षों से हमारे-
जीवन का सम्बन्ध प्रकृ-
ति से भी छूटता जाता है।
खेल, कूद और पर्वत भ्रमण
व नदियों में तैरना तथा
अन्य साहस पूर्ण कार्य-
क्रमों अब हमारे विनोद
के विषय नहीं रहे। न
ऊपर के अधिकारी वर्ग
को ही इस बात का शौक
है। उस पार गुरुकुल

स्वयं प्रकृति की गोद में था
अतः उस सम्बन्ध को बना-
ये रखने के लिये विशेष
यत्न की ज़रूरत न थी पर
अब जब गुरुकुल प्रकृति
माता की गोद से अलग
होकर इस पार आ बसा
है उस पुरानी भावना को
कायम रखने की और
अधिकारीगण को विशेष
यत्नवान होना चाहिये
था। पर इस तरफ उपेक्षा
दिखाई जा रही है। यह
सहन की भावना क्रमशः
कम होती जाती है। इस
प्रकार उद्देश्यहीनता और
आरामतलबी तो न मिला-
कर हमारे असन्तोष को
अधिक बढ़ा देती है।
उपाध्यायों में किसी का
जीवन और विचार इतने
ऊँचे नहीं कि वह विद्या-
र्थियों में कोई कुछ फूंक
सकें। विशेषकर प्रवा-
न्यास की नई प्रणाली ने
तो गुरु शिष्य का रहा
सहा सम्बन्ध भी समाप्त
सा कर दिया है। उधर
अधिकारी यह समझते हैं
कि Routine को चाल
न चलाने से ही उनका
कार्य पूरा होगा।

विद्यार्थी भी जैसे तैसे अधिक
अंक प्राप्त करके अपने-
आपको सन्तुष्ट कर लेते हैं।
परन्तु अध्यापक और विद्या-
र्थी में कोई पारस्परिक-
आन्तरिक सम्बन्ध स्थापित
नहीं होने पाता उनके आ-
चार विचार के निर्माण-
करने में ऊपर से कोई सला-
ह देने वाला नहीं। उनमें
अन्तर्निहित शक्तियों का
विकास करने का कोई प्रयत्न
अन्दर से नहीं होता। अध्या-
पकों और विद्यार्थियों की
आन्तरिक वास्तविकता का
कोई अवसर ही नहीं आता
महाविद्यालय की व्या-
पक एवं सामान्य वाद-
विवादों में मुश्किल से ही
कोई भाग लेता है। इन
में भाग लेना तो
अध्यापकों की शान के
खिलाफ ही है। इन
सब बातों का जो असर
विद्यार्थियों के जीवन
पर पड़ता है वह स्पष्ट
ही है।

यह बात हमें
ध्यान रखनी चाहिये कि
योग्य पढ़ाने वालों की
उपस्थिति में किसी भी
विद्यालय में असन्तोष
हो ही नहीं सकता।

यदि लड़कों में किसी उच्च आदर्श की भावना भर दी जाय उनके सामने कोई सक्रिय कार्यक्रम रखा जा सके तो हो ही नहीं सकता कि लड़कों में असन्तोष की भावना मौजूद रह सके। यदि पढ़ने वाले अपने जीवन से और साथ ही साथ अपनी योग्यता से लड़कों में उन आदर्शों को भरें तो हो ही नहीं सकता कि लड़कों को भविष्य जीवन के सम्बन्ध में निराशा के भाव घेर सकें। आशावाद और आत्मविश्वास साथ२ चलते हैं जहां निराशा है वहां आदर्श हीनता है। जहां अयोग्यता है वहां निराशा रह सकती है। योग्य उपाध्याय के शिष्य भी कभी निराशावादी हो ही नहीं सकते उनके उपाध्याय की योग्यता उन्हें इतना प्रभावित किये रखेगी कि उन्हें निराशा छू भी नहीं सकती। नवयुवकों को भोगली बातें कभी अभिभूत नहीं कर सकती।

उनको बनाने वालों को चाहि-
ये कि वे अपने जीवन में
आदर्शवादिता को स्थान दें।
यदि वे लड़कों को मनस्वी
बनाना चाहते हैं तो उन्हें ध्या-
न रखना चाहिये कि समय
आने पर स्वयं आत्मबलिदान
प्रबलता के आदर्श से पीछे
न हटें। ऐसा कोई सेना-
पति वीरों की सेना को नहीं
सम्भाल सकता जो स्वयं
मौत से डरकर भाग जाता
हो और यही बहुधा पाठ-
क जो दरअसल है - जो ऐसी
कठिनाइयों से घबराकर
के आदर्श से च्युत हो-
जाता है उन्हीं युवकों ने

जीवन को बना सकता है
यदि ऐसे 'पुस्तकालय' औ-
र विषय करके लिये जो-
य शिक्षा और आदर्श-
वादिता से मिलकर ही नव-
युवकों के हृदय को मोड़
सकते हैं। किन्तु सच्चापन
या कोरी शिक्षा उन्हें कभी
प्रभावित नहीं कर सकती।
अतः वर्तमान असन्तोष-
और अकर्मण्यता का एक
मात्र इलाज यही है कि वि-
द्यार्थियों की बौद्धिक शक्ति
को जागृत किया जाये-
और उसे प्रयोग करने का
अवसर दो। लोग ऐसा

में आदर्श नागरिकता की
भावनाओं को जगाने में
प्रयत्न किया जाय। पर
यह प्रयत्न विद्यार्थियों के
हृदय को प्रदीप्त किये बिना
भी सफल नहीं होगा।
साथ ही उनके आमोद प्र-
मोद में भाग लेना भी
ऊपर के अधिकारियों के
लिये आवश्यक है। इसके
सिवाय इस दिशा में किये
गये सब प्रयत्न प्रायः
निष्फल होंगे।

इसलिये आजकल इस-
की आवश्यकता यह
है गुरुकुल जैसी शिक्षा
संस्थाओं का संचालन शि-
क्षा विदों के ही हाथ में हो-
ना चाहिये। किसी प्रकार
के साम्प्रदायिक संघ का
इसकी नीति निर्धारण में
प्रभुत्व होना बड़ा ही घात-
क है। खासकर शिक्षा के
मामलों में साम्प्रदायिक-
ता भयानक बुरी चीज है।
बिना इसके अन्त कोई भी
सुधार होना असम्भव है।
मेरी इच्छा वर्तमान शिक्षा प्र-
णाली की आलोचना करने
की भी थी पर किसी
अन्य अवसर के लिये छोड़
दी गई है। आशा है पाठक
मेरी इस धृष्टता को क्षमा
करेंगे।

स्नेहमूर्ति श्रद्धानन्द

लेखक – ब्र॰ विनोद चन्द्र जी

इस शान्त समय में मेरे विचार अब काल की यात्रा में तल्लीन हैं जिसका सम्बन्ध अतीत काल से है। वह समय अत्यन्त सुन्दर था। अनुभवहीन हमारे हृदयों ने मात्र निर्विशेष स्नेह का अनुभव किया था। उस समय हम स्नेह की परिभाषा करना न जानते थे। स्नेह हमारे लिये अप्राप्य वस्तु न थी। स्नेह की परिभाषा हमारे लिये "न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते" के अतिरिक्त कुछ न थी। उस समय हमसे अत्यन्त स्नेह करने वाला एक व्यक्ति था। उस व्यक्ति ने हमारे नन्हे हृदयों को अपनी मुट्ठी में कर लिया था। हमारी चञ्चल आँखें अनायास ही उसकी तरफ आकर्षित हो गई थी। उसे हम 'कुलपिता' कहते थे; वह सच्चे अर्थों में 'कुलपिता' था। उसके हृदय में अपने कुलपुत्रों के लिये इतना अधिक स्नेह था कि उनके ज़रा से भी दुःख को देखकर वह आँसू बहाता था और उसे यथाशक्ति दूर करने की चेष्टा करता था।

उसे मूसलाधार वर्षा के अन्दर अँधेरी रात में हाथ में दण्ड लेकर फिरते हुए भी लोगों ने देखा है। लोगों ने देखा है कि वह ठिठुरता हुआ अन्दर अपने कुलपुत्रों

आज कल

पर कम्बल, रजाई इत्यादि डाला करता था। रात में गोद में लेकर चिकित्सालय की तरफ अपने अनेक कुटुम्बों को ले जाते हुए भी लोगों ने अच्छी तरह देखा है। अपने बच्चों को काँटा लगा देखकर वह कुलपिता अपने हाथों से ही उनके काँटे निकाला करता था। देखने वालों के लिये यह दृश्य सचमुच स्मरणीय था। माता पिता तथा पिता के स्नेह से सर्वथा अपरिचित बच्चों के लिये यह स्नेह का प्रथम "पदार्थ-पाठ" था। इस प्रथम "पदार्थ पाठ" में उनके लिये स्नेह की परिभाषा करना आवश्यक न था।* इस "पदार्थ-पाठ" का आदि शिक्षक स्नेह मूर्ति कुलपिता श्रद्धानन्द था।

हमारे हृदय आज भी उसी स्नेह से भरे हैं। हमारी आँखें आज भी उसका प्रीत दर्शन करना चाहती हैं। किन्तु आज हम उसकी स्नेह मूर्ति केवल स्मृति द्वारा ही मैं-धार कर सकते हैं।

मुझे अच्छी तरह से याद है कि एकबार बातचीत के सिलसिले में एक सम्मान-नीय व्यक्ति ने मुझे यह बताया था कि, "हमारे कुलपिता" सदा यही चेष्टा करते थे कि गुरुकुल जन्मोत्सव पर सभा की द्वितीय बैठक से पूर्व ही सब शिकायतें दूर हो जावें। एकबार वे सब ब्रह्मचारियों के मध्य में जाकर बैठ गये और उनसे कहा कि अच्छा अब शिकायतें सुनाओ। एक ने खड़े होकर कहा कि "हमको इस महीने फल नहीं मिले"। कुलपिता ने आँखों में आँसू भरकर उत्तर दिया कि प्यारो! मुझे दुःख है कि मैं तुम्हें तुम्हारे लिये फलों का प्रबन्ध न कर सका। अब की बार मेरे प्रबन्ध में इतनी त्रुटि न

आज कल

रा थी। इस बार मैं तुम्हें खूब फल खिलाऊँगा। बताने वाले बताते हैं कि उस समय सब को यही अनुभव हुआ था कि हमें फल मिल गये। सच्चा स्नेह क्या नहीं कर सकता? वेह स्वर्गीय स्नेह मूर्ति श्रद्धानन्द जी यदि कोई चमत्कार बनाकर ठीक वही बच्चों के सामने फल खिलाने की प्रतिज्ञा करने वाली मूर्ति बना सके तो आज हम भी हमारे समझदार हृदय उस मूर्ति के सामने कोई शिकायत कर ही देंगे। हमारे हृदय अवश्य ही उस मूर्ति के सामने झुक जायेंगे। स्वतः संकोच छोड़ कर अपने हृदय उसके सामने खोल देंगे।

जब जब मैं उस पिता के विषय में सोचता हूँ मेरे सामने वह स्नेह मूर्ति के रूप में विराजमान होता है। मैं उसे दलित जातियों से प्रेम करते हुआ देखता हूँ। अछूतों को गले लगाता हुआ पाता हूँ। हतभाग्य भारतवर्ष के लिये उसे आँसू बहाते हुए भी मैं अनेक बार देख चुका हूँ।

अभागा भारतवर्ष अभी श्रद्धानन्द को अब भी नहीं समझ सका। वह उसे साम्प्रदायिक नेता के रूप में देख कर उस के उज्ज्वल यश को मिटाना चाहता है। श्रद्धानन्द हमारा नहीं, भारतवर्ष का नहीं अपितु संसार का था। आगे आने वाली सन्तानें जब अपने पुनरुत्थान के इतिहास की छानबीन करेंगी तो स्नेह मूर्ति श्रद्धानन्द का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा पायेंगी।

अय अभागे भारतवर्ष। तू अब तेरे पद दलित पुत्रों की अस्तित्व की रक्षा के लिये प्राण देने वाले श्रद्धानन्द को

पहचान और प्रसन्नचित्त हृदय से उस प्रभु की स्तुति के नम्रता स्तुति को सर्वदा जाग्रत रख कर अपना उद्धार कर।

: ———— o ———— :

शुद्धि.

लेखक - पं इन्द्र सेन जी.

आज जैसे दिन हमारे लिये महत्वपूर्ण सन्देश लेकर आते हैं। हमें अपने कर्तव्य पथ पर चलने के लिये प्रोत्साहना देने आते हैं। आज एक दिव्य आत्मा ने सचाई के लिये अपनी बलि दी थी। उसका जीवन परोपकार का जीता जागता उदाहरण था।

उसने अपने देश तथा देशवासियों के लिये जो भी कार्य उचित समझा उसी के लिये जी जान से कोशिश की। उसने वैवाहिक जीवन पर दृष्टि डालिये :- ब्रह्मचर्य के लिये, जातपात तोड़ने के लिये; शुद्धि के लिये, दलितों के उद्धार के लिये इत्यादि २ अनेकों कार्यों के लिये वह आजीवन प्रयत्नशील रहा।

मुझे याद है वह दिन जब हिन्दू उसकी अर्थी के साथ २ ज़ोर से गाते हुए देहली के बाज़ारों में से गुज़रे थे। वह जोश - "मक़तलों से होगी कभी बन्द शुद्धि, हमें बच्चा २ कटाना पड़ेगा"।

उसने अपनी बलि शुद्धि के लिये कर दी। शुद्धि का आप क्या अर्थ समझते हैं। क्या-कि हवन कुण्ड के सामने अछूतों को स्नान कराकर बिठा दीजिये और हवन के मन्त्र पढ़ कर फिर उनसे कुछ मिष्ठान्न बँटवा दीजिये। नहीं ! इसका नाम शुद्धि नहीं है। कइयों का विचार है कि शुद्धि तभी हो सकती है जबकि अछूत अपने कर्म पवित्र करें। चालचलन सुधारें। नहीं ऐसी बातें ढकोसले हैं। मुझे इस समय के मुन्शी प्रेमचन्द की पं. लीलाधर वाली गल्प के कुछ वाक्य स्मरण हो आते हैं -। उसमें पं. लीलाधर अछूतों को उपदेश दे रहे हैं कि हे अछूतो तुम उन्हीं ऋषियों की सन्तान हो कि जिनकी हम हैं। तुम्हारी धमनियों में उन्हीं का रक्त जोश मार रहा है। इतने में एक बूढ़ा अछूत उठकर सवाल करता है कि अगर हममें उन्हीं का रक्त है तो क्या आप हमारे साथ रोटी खाने को तैय्यार हो। पं लीलाधर दबी जबान से कहते हैं, हाँ इसमें मुझे कोई उज्र नहीं है। इसके बाद बूढ़ा फिर सवाल पेश करता है कि क्या आप विवाह सम्बन्ध करने को तैय्यार हैं लीलाधर कहते हैं - इसके लिये अभी आप को अपना व्यवहार ठीक करना होगा। चालचलन अच्छा बनाना पड़ेगा। जवाब में बूढ़ा कहता है - हमें ऊँचा उठना नहीं आता, हम जैसे हैं, अच्छे हैं। मुसलमान भाई हमें इसी हालत में अपने साथ मिलाने को तैय्यार हैं। आप अपने उच्च व्यवहार का ढोंग करते हैं। माँस खाने वाले अंग्रेजों के साथ रोज हाथ मिलाते हैं। उनके नाचघरों में जाते हैं।

शराब पीते हैं। सब मांस इस्तेमाल करते हैं। हमने इनमें से एक भी बुराई नहीं है।

कहने का सारांश यह है कि शुद्धि तब तक कोई अर्थ नहीं रखती जब तक कि हिन्दू समाज इन नाम के अछूतों के साथ विवाह और खानपान के सम्बन्ध को स्थापित नहीं करता। जातपात का भूत हमारे साथ इतना लगा हुआ है कि हम इससे क्षणमात्र के लिये भी बरी नहीं हो सकते। पंजाब में जहाँ भी आर्य-समाज का सबसे अधिक ज़ोर है, वहीं के प्रसिद्ध पत्र Tribune को ले लीजिये। हर एक Matrimonial के इश्तहार में जात ज़रूर लिखी होती है। Advertisement अगर किसी कट्टर आर्यसमाजी का होगा तो वह जात लिखने के बाद देने के बाद इतना और कह देगा कि Without any caste distinction. जब तक कि हम में जात का एक Superstitious ideas superstitious idea मौजूद है तब तक हमारी उन्नति होनी बहुत मुश्किल है। यहाँ पर मेरा जात पात तोड़ने से यह अभिप्राय नहीं है कि आप जातपात तोड़कर कन्या का Worth भी लेवें। नहीं, हमें रोज़ देखने में यह आता है कि जातपात तोड़ने से कन्या अधिक योग्य प्राप्त होती है और इसी प्रकार से कन्याओं को भी वर अधिक योग्य प्राप्त होते हैं। अधिक योग्य प्राप्त होने का कारण choice of field का आना है।

इस अवसर पर मैं प्रत्येक कुल-वासी का ध्यान इस महत्त्व पूर्ण विषय की ओर आकर्षित करना चाहता हूं और स्पष्ट शब्दों में कहना चाहता कि शुद्धि का वास्तविक उद्देश्य तभी पूरा होगा जबकि सर्व साधारण के दिलों से यह जातपात का पक्ष-पात दूर हो जायगा। उस ऋषि स्वामी की आत्मा को भी तभी पूर्ण शान्तिप्राप्ति होगी जबकि आप दलितों का उद्धार, और अछूतों की शुद्धि अपने साथ उन्हें मिलाकर सच्चे अर्थों में कर दिखा-येंगे।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी.

लेखक-: श्री नरदेव जी शास्त्री वेद तीर्थ.

स्वामी श्रद्धानन्द जी में वैसे तो अनेक गुण थे जिन के कारण उन की ख्याति हुई पर सब से श्रेष्ठ गुण था उद्देश्य-प्रियता। इस उद्देश्य प्रियता के कारण उन्होंने अपने जीवनकाल में अनेक कष्ट उठाए पर अपनी उद्देश्य प्रियता को नहीं छोड़ा। उद्देश्य प्रियता के लिए ही उन्होंने अपना सब कुछ " जनतायै स्वाहा इदं जनतायै इदं न मम " कह कर आहुति दे दी। दूसरा गुण निर्भयता है, एक बार जहां के उद्दिष्ट स्थल की ओर चल दिये फिर वह संकटों से कभी नहीं डरते थे, अपने मार्ग में अग्रसर होने पर उन को अपने इष्ट से इष्ट जन को भी छोड़ने का अवसर आया तब तनिक भी विचलित नहीं हुए। तीसरा गुण उदारता, इस गुण की तो उन के शत्रु भी सहस्र मुख से प्रशंसा करते हैं - एक बार जिस को अपना कहा

उस के लिए मर मिटे। सार्वजनिक जीवन में भी सैंकड़ों बार कभी स्वजनों से और कभी परजनों से विरोध हुआ सही, पर वे उन से लड़ते समय खूब लड़ते थे और जहां लड़ाई समाप्त हुई नहीं कि पुन: वही सौम्यरूप, फिर वही मित्रता — सार्वजनिक जीवन में अग्रसर होने में इस गुण ने भी अधिक सहायता पहुंचायी। स्वामी श्रद्धानन्द जी पुण्य-प्रतापी पुरुष थे। जिस काम में हाथ डाला उसी में यशस्वी हुवे और "यशः पुण्यैरवाप्यते" अथवा "पुण्यैर्यशोलभ्यते" इस लोकोक्ति को अक्षरशः चरितार्थ कर के दिखला दिया। उन का अदम्य उत्साह, लोक-संग्रह की अद्भुत रीति-नीति उन का दाक्षिण्य आदि. किस किस गुण का वर्णन किया जाय। उन्होंने अपने जीवन काल में जनतात्मा की जितनी सेवा की उस से, वे स्वयं सन्तुष्ट थे कि नहीं; नहीं कह सकते पर इतना अवश्य कह सकते हैं कि उन की सेवा से जनतात्मा परम सन्तुष्ट थी और जब जनतात्मा सन्तुष्ट थी तो परमात्मा भी क्यों अप्रसन्न रहते – उन को अपने पास बुला लिया तो ऐसे ढंग से बुला लिया कि जिस पद के लिये बड़े से बड़े भी लालायित रहते हैं।

हताश.

लेखक - ब्र. विनायक जी.

१.

वह अभागा था। उसका जीवन नद में बहती हुई उस लकड़ी के समान था जो लहरों से निरन्तर थपेड़े खाती रहती हो और न मालूम कब उस लहर में कहाँ लग जावे। वह प्रायः कहा करता था — "मेरा जीवन निरर्थक है। जो उमंगें मन में भरी हैं, वे मेरे निर्दयी भाग्य से कुचल दी गईं। अब मेरे इस संसार में कोई काम नहीं" यह कहते २ उसका दम घुट जाता था और नेत्रों में आँसू भर आती थीं। यद्यपि वह घर से खुशहाल था और भी मित्र व भाई बहन थीं, पर तो भी वह अपने को निःसहाय अकेला अनुभव करता था। उसकी बातों में एक तरह की निराशा सी भरी रहती थी। मालूम पड़ता था उसका हृदय निराशा के बादलों से घिरा हुआ है।

× × ×

२.

आज मैं सब बातें तुमसे कह जाऊँगा, कुछ छिपा न रखूँगा। बिना कहे मन भी तो नहीं मानता। जब से वह मार्मिक दृश्य देखा है तब से तो मन और भी उद्विग्न हो गया है, अतएव इस उद्विग्नता को कम करने अथवा लिखने के सिवाय मेरे पास और कोई शान्ति का मार्ग ही नहीं। तुम पढ़ो चाहे न पढ़ो पर मैं ज़रूर कहूँगा, लिखूँगा। हाँ, - उसकी और मेरी मैत्री छोटे पन से ही था।

आज कल

हम दोनों एक जगह के ही रहने वाले थे और एक स्कूल में पढ़े थे। बचपन का साथ था। कभी अलग होने को जी न चाहता था। उस समय हम एक ही कॉलिज में साथ ही साथ पढ़ते थे। मुझे अच्छी तरह से याद है उस वक्त न उसका खेल में जी लगता था न बहुत पढ़ने में पर उपन्यास पढ़ने का उसे बहुत शौक था। कॉलिज लाइब्रेरी में ऐसा कोई उपन्यास न होगा जो उसने न पढ़ा हो। वह कहता था कि किसी दिन मैं भी प्रसिद्ध उपन्यासकार बन जाऊँगा। वह कभी २ कविता भी करता था। जब हम दोनों अपने कमरे में साथ बैठे होते थे तो वह अपनी चिरलालित आशाओं को एक २ करके बाहर निकालता। वह कहता - "कि विलायत जाकर मैं डॉक्टर की उपाधि लाऊँगा और यहाँ साहित्याचार्य हो जाऊँगा और फिर यहीं प्रोफेसर बन जाऊँगा फिर कहता - नहीं इनमें कुछ ज्यादा लाभ नहीं - ऐसी तजवीज करनी चाहिए भारत का नेता बन जाऊँ अतः विलायत जाकर बैरिस्टर बनूँगा फिर कुछ समय बैरिस्टरी करके खूब रुपया जमा देश का काम शुरू कर दूँगा। देखो न, सभी लीडर वकील हैं।

इसी तरह बैठा वह अपने भविष्य के कार्यक्रम को बांधता रहता था। पर कौन जानता कि दैव उससे विमुख है। उसके हृदय में इस प्रकार और उज्ज्वल भविष्य का कुछ भी मूल्य नहीं। वह अपने एक ही झटके से न जाने सभी आशा श्रृंखला को तोड़ सकता है।

कॉलिज के दो साल तो हमारे भली तरह गुज़र गये पर तीसरे साल उसे एक [illegible] रोग ने आ घेरा यद्यपि इस रोग के चिह्न तो बहुत पहिले ही प्रकट हो गये थे और कुछ उसने अपना बचाव भी धारण कर लिया था, पर अब तो यह अपने पूरे जोरों

आज कल

पर था। इलाज पहिले से ठीक हो रहा था पर उसका कुछ नतीजा ही न हुआ। हाँ इतना जरूर हुआ रोग ज्यादा न बढ़ने पाया। पर उसकी आशाओं की लहराती हुई खेती को जलाने के लिये इतना ही रोग रूपी पाला काफी था।

इसी समय से उसका जीवन बिल्कुल बदल गया। उसका वह खिलता हुआ चेहरा मुरझा गया, अब उसमें वह चपलता और उत्साह न रही जो आज से कुछ पहिले थी। उसको एक तरह की चिन्ता ने घेर लिया चाहे वह कितनी ही प्रसन्न रहने की कोशिश करता पर वह पूर्व की सी छटा उसके मुँह पर आती ही न थी। स्वास्थ्य तो उसका बिल्कुल ही गया था। जो देखता यही कहता - क्यों मदन, (उसका यही नाम था) तुम्हारा स्वास्थ्य इतना गिरा हुआ है. चेहरा बिल्कुल फीका सा पड़ा हुआ है क्या बात है? इसपर वह भी रूखी हँसी हँसकर बात को टाल देता था। पर वास्तविक कारण को तो मेरे सिवाय उस समय शायद कोई भी न जानता था पर पीछे से जाकर सब को मालूम पड़ गया। मनुष्य मित्र के सामने अपने हृदय को खोलकर रख देता है क्योंकि उसके सामने किसी प्रकार की झिझक नहीं रहती। वह उन बातों को भी - जिनको वह सगे सम्बन्धियों के सामने भी कहते हुए शर्माता है, मित्र के सामने ऐसे खोल देता है जैसे सूर्योदय पर कमल अपनी पंखुड़ियों को, इसीलिये मेरे और उसके बीच किसी बात का छिपाव न था। अब वह न किसी कॉलिज की सभा में ज्यादा

भाग ही लेता था न बोलता था यद्यपि उत्तम वक्ता बनना भी उसकी एक आशा थी पर वह ज्यों की त्यों रह गई। मैं उसे हमेशा समझाता रहता था पर मेरा सारा परिश्रम नदी के प्रवाह में तिनके की तरह बह सा जाता था। उसकी यह दशा देखकर मुझे भी बहुत कष्ट होता था पर इसका कोई उपाय भी तो न था।

× × ×

3.

शाम का समय था हरी २ घास पर सूर्य की सुनहरी किरणें लुढ़क रही थी आकाश में बड़े २ बादलों के मनोरम अंग भी चित्रकारी कर रहे थे। अभी वर्षा होकर ही चुकी थी। पत्तों पर, घास पर जलकण मोतियों से चमक रहे थे। इस समय मैं और मदन अपने कमरे में ही बैठे २ कोई कविता की किताब पढ़ रहे थे। प्रस्तुत कविता का विषय "प्रकृति" ही था। वह उसकी एक एक लाइन को पढ़ता और उसकी फिर खूब व्याख्या करता। इस समय वह कविता में ऐसा तल्लीन था जैसा बच्चा अपने खिलौने में, और उसकी आंखें स्थिर और शान्त थी जैसे कि अर्क मे भीगे हुए पक्षी की।

उस समय की उसकी मूर्ति रह रह कर मेरे सामने आ जाती है पर आज-कल वह गाना और झूमना इस समय अतीत के विषय हो चुके हैं, आज इसी समय हमारे कमरे की पिछली खिड़की की तरफ़ एक बड़ी भयानक आवाज़ हुई। उसका पोपला और झुर्रीदार मुंह, उसकी अन्दर धंसी हुई आंखें और जीर्ण-शीर्ण मन मे एक दया को अनिवार्य ही पैदा कर रहे थे उसका सारा कांपता हुआ शरीर

जरा भार को उठाने में असमर्थ सा प्रतीत हो रहा था। और दो उसने हमारे सामने हाथ पसार कर बड़ी रुंधी हुई आवाज़ में कहा - बेटा! "एक पैसा दे दे मैं दो दिन से भूखी हूँ तिस पर यह बुढ़ापा और भी सता रहा है, जरा रहम कर" इतना कहते २ उसका दम चढ़ गया और उसने थोड़ी देर रुककर फिर बड़बड़ाना शुरू किया "अरे किसे मालूम था इस जिन्दगी में ये दिन भी देखने पड़ेंगे, क्या मालूम था कि दर-दर भटकना पड़ेगा, अरे वह मेरा हाथी सा झूमता बेटा होता तो ये दिन क्यों देखने पड़ते"।

हमने बड़ी उत्सुकता से पूछा कि "बुढ़िया! तू बड़बड़ा क्या रही है"। वह एकदम चौंक सी गई जैसे किसी विचार में मग्न हो और निराशा के साथ बोली - "अरे बेटा, मेरा हाल जानकर तुम क्या करोगे, मेरे जैसे कितनी दुखिया इस संसार में फिर रहे हैं। तुम्हारे दिल में दुःखाना नहीं चाहती। बस तुम मुझे एक पैसा दे दो ईश्वर तुम्हें खुश रखे" यह सुन मैं कोट की जेब से पैसा निकालने लगा पर मदन ने फिर पूछा - "नहीं बुढ़िया बता तो क्या बात है।" यह कह वह अपने हाथ की किताब को मेज़ पर रख बड़े ध्यान से उस बुढ़िया के मुँह की ओर देखने लगा। वह बोली - "क्या कहूँ मेरे भी तुम्हारे जैसा एक बेटा था" मैं इस समय मदन के चेहरे के उतार

आज कल

मदन को बड़े ध्यान से देख रहा था यह बोला हाँ, तो बुढ़िया ने अपना कहना जारी रखा - "उसकी उठती जवानी को देख मुझे यह बुढ़ापा भी बड़ा प्यारा मालूम पड़ रहा था। उसका पिता उसे छोटी उम्र में ही छोड़कर चल बसा था। आज तक मैं ही अकेली उसकी माता भी थी और बाप भी" इतना कहते 2 उसकी धंसी हुई आँखें कुछ चमक सी गईं और उसके मनोभाव चेहरे से स्पष्ट हो उठे। वह एक ही सांस में उपरोक्त बातें कह गई फिर संभलकर वह बोली "इसी जवानी में उसे ----- इस रोग ने आ दबाया" — इस समय उसकी आवाज़ जरा तीव्र हो गई थी। मदन रोग का नाम सुनते कुछ घबरा सा गया क्योंकि उसे भी वही रोग था। समान परिस्थितियों में पड़े हुए आदमियों की यह एक दूसरे के प्रति सहानुभूति होती जाती है। अपने रोग की याद आते ही मदन के नयनों में पहले भावी जीवन की एक मधुर झलक दिखाई दी और फिर की निराशा का साम्राज्य। उसी समय उसकी आँखों से दो आंसू टपक पड़े। उसने बड़ी अन्यमनस्कता से पूछा तो फिर उसका इलाज नहीं किया? "इलाज क्यों नहीं किया बेटा, अपना सारा रुपया पानी की तरह बहा दिया" बुढ़िया ने बड़े दुःख से कहा "पर यह भाग्य तो मुंह मोड़ बैठा था। रात-दिन मैं उसके सिरहाने बैठी रहती थी। वह कहता कि माँ अब मैं नहीं बचूंगा-

आज कल

क्यों फिजूल इन झंझटों में जेबें भरती हो। मैं रो रो कहती नहीं बेटा तू मगर अच्छा हो जायगा। पर हुआ वही जो होना था - लड़का चल बसा" - यह कहकर बुढ़िया फिलख फिलख कर रोने लगी। यह देख मदन के मनोभाव, जो कि अब तक पहिले शान्त से थे, सताये हुए मक्खी के छत्ते के समान भनभना उठे। उसका चेहरा उतर गया और आँखों से स्पष्ट आँसू टपकने लगे। इस करुण दृश्य को देखकर मेरा मन भी शान्त न रह सका - उसमें एक उथल-पुथल सी मच गई। मदन ने मेरे हाथ से पैसे लेकर उस बुढ़िया को दे दिये। वह बेचारी धन्यवाद आशीर्वाद देती हुई चली गई।

मैंने फिर मदन से वही कविता पूरी करने को कहा पर उसको तो इस बात की चिन्ता न थी। शायद उसे यहाँ तो यह ख्याल था कि इस लोगों में भी बुढ़िया के लड़के की तरह दुर्भाग्य न पा सकेगा। वास्तव में वह लोग भी बड़ा ही रोचक था। रह रहकर उसके मुँह पर गहरी चिन्ता के भाव निराशा के चिन्हों की तरह अंकित हो रहे थे।

हमें इसी तरह कमरे में बैठे २ काफी देर हो गई। इतने में खाने का समय भी हो गया, पर वह मेरे बहुत कहने पर भी उस दिन खाने नहीं गया। उस घटना का प्रभाव कुछ ऐसा प्रभावशाली पड़ा कि उसके जीवन में सरलता का नाम भी न रहा और थोड़े पर उदासी सी छा गई। अब वह पहले से भी ज्यादा चुप रहने लगा -

कौन जानता था कि ये उसकी भावी घटना के सूचक चिह्न थे।

× × ×

४

सरदियों के दिन थे। सारे होस्टल के लड़के दस बजे तक सो चुके थे। अपने लिहाफों में सब ऐसे दुबके पड़े थे ज्यों चिड़िये अपने घोंसलों में। तमोमयी रात ने तम का एक ऐसा परदा सा डाला हुआ था कि हाथ को हाथ न सूझता था। मैं करीब रात के एक बजे पेशाब के लिये उठा। उस निविड़ अन्धकार को देख कर ज्यों ही मैंने अपनी मेज़ के ऊपर का बिजली का लैम्प जलाया था। अचानक मेरी दृष्टि मदन के बिछौने पर पड़ी तो कलेजा धक् सा रह गया; वह खाली था। मैं जहां जैसे खड़ा था वैसे ही खड़ा रह गया मानो लकवा मार गया हो। इस आकस्मिक घटना को देख मेरा तो पेशाब भी बन्द हो गया। मैं सोचने लगा - उसकी एक २ बात से निराशा टपकती थी। बीसियों बार उसने कहा था कि इस जीवन से मरना अच्छा है। क्यों न घटना के बाद से तो उसका यह विचार और भी दृढ़ हो गया था। क्या मालूम था कि उस घटना का ऐसा घातक प्रभाव होगा। कहीं वह अपने आप को ...... इस विचार के आते ही मेरा शरीर थर थर कांपने लगा और एक २ रोम किसी अज्ञात भय से खड़ा हो गया। मैं अपने बिस्तर पर बैठ गया। यह सब एक मिनट में ही हो गया, कहने में तो ज़रा -

आज कल

देर लगती है पढ़ने में बहुत कम। कुछ देर बाद मैं अपने बिस्तर से उठा और अपने कमरे के लड़के को जगाया। मैं कुछ हड़बड़ाया-सा था एक दम मैंने उसे हिलाया वह भी - हड़बड़ाकर उठ बैठा - मैंने कहा - "मदन न मालूम कहाँ चला गया ? वह बड़े आश्चर्य से बोला - "अरे यार! तुम तो वहमी हो गया कहाँ होगा यहीं पेशाब चला गया होगा" "पेशाब गया होता तो अभी तक आ जाता" मैंने बड़ी निराशा से कहा। हरि (लड़के का नाम) बोला "तो क्या वह बहुत देर से नहीं है ?" "हाँ, जब से मैं उठा हूँ तब से तो मैंने उसे देखा नहीं पर मुझे उठे काफी देर हो गई है।"

अब तो हरि को कुछ शंका हुई। इतने में हमारे कमरे का तीसरा लड़का भी जाग गया, बोला - "क्या बात है, क्या फिर तुम्हारी पढ़ाई जारी हो गई ?" "नहीं, हम मदन को ढूंढ रहे हैं न मालूम वह कहाँ चला गया" हरि ने जवाब दिया। "मैं तो बहुत दिनों से ताड़ गया था कि वह एकाध जरूर ऐसा ही कोई न कोई काम करेगा" लड़के ने कहा।

अब तीनों की सलाह हुई कि अपने अध्यक्ष से यह बात कही जाए हम तीनों उनके कमरे में पहुंचे, उन्हें जगाकर सारा किस्सा कह दिया वे घबराये हुए हमारे साथ उठकर हमारे कमरे में आए। इस चहल-पहल को देखकर कुछ लड़के और जाग गए। सब में काना-फूसी होने लगी। थोड़ी देर में प्रायः सारी कॉलिज जाग उठा

आज कल

और हमारे कमरे के सामने बहुत लड़के इकट्ठे हो गये। यह खबर बिजली की तरह सारे होस्टल में फैल गई।

मेरी दशा उस समय उस इंजिन की तरह थी जिसे जिधर को मोड़ना चाहे मोड़ दे। कोई मुझे कुछ कहता कोई कुछ मैं भी सबकी बातों को मान लेता था। ऐसा मालूम पड़ता था कि इस समय मेरा दिमाग बिल्कुल विचार-शून्य हो गया था। कुछ सोचे न बन पड़ता था। अन्त में अध्यक्ष के कहने से रात को लड़के चारों तरफ ढूंढने निकले मैं भी कुछ लड़कों के साथ हो लिया। उस समय ढूंढ में न जाने कहां से बिजली की सी ताकत आ गई थी। अपने आप पैर आगे-२ बढ़े चले जा रहे थे थकावट का नाम न था।

सब लड़के सबेरे ८-९ बजे तक उसे ढूंढ ढूंढ कर लौट आए पर केवल प्रयत्न व्यर्थ गया। हमारी पार्टी कुछ पहिले ही लौट आई थी। उस दिन हमारा कॉलिज बन्द रहा। दो दिन उसी विचार की चर्चा रही - सब कहते थे कि उसने आत्मघात किया है। मुझे भी इसमें कुछ सन्देह न था क्योंकि उसके जीवन क्रम को देखते हुए संसार की गुंजाइश ही न थी।

सारे दिन भर मैं अपने कमरे में बैठा रहा - कभी रोता कभी चुप हो जाता और कभी बकने लगता। आप समझ सकते हैं कि अपने प्यारे साथी से थोड़ी देर का वियोग भी कितना असह्य होता है और यह तो फिर आजीवन था। मेरे दुःख को

आज कल

वह अच्छी तरह से अनुभव कर सकता है जिसका एक ही साथी हो और वह भी उससे अलग हो जाए।

इसी समय सहसा मेरी दृष्टि किताब के नीचे दबे एक कागज पर पड़ी, वह आधा किताब से बाहर था और आधा उसके नीचे दबा हुआ। मैंने उसे बाहर खींच लिया उस पर कुछ मेरे ही हाथ के लिखे हुए अक्षर मालूम पड़े। इस-समय मैं दुःख से पागल सा हो रहा था और मेरी आँखें डबडबाई हुई थीं इसलिए पहिले तो उसे पढ़ न सका। फिर अपनी आँखों को पोंछकर पढ़ा — उसमें लिखा था — "प्यारे मोहन! मुझे अब तुम विदा दो, मैं जो कुछ करने जा रहा हूँ उसके लिये मैं लाचार हूँ अपनी लाचारी को मैं ही समझता हूँ। मुझे ढूँढने का व्यर्थ प्रयत्न न किया जाए। तुमसे बिना पूछे कार्य करने का यह पहिला ही अवसर है पर क्या करता यह कार्य ही ऐसा है। हमारे बीच जो एक अटूट सम्बन्ध स्थापित हो गया था वह अब भी नहीं टूटा और न कभी टूटेगा। मेरी सबको प्रणाम कहना।" मैं यह सारा पत्र पढ़ गया पर कुछ समझ न आया, क्योंकि दिमाग ठिकाने न था। बार बार आँखों के सामने अक्षरों का धुँधला-सा आ जाता था। मैंने उसे फिर पढ़ा। एक लाइन पढ़ता जाता था और आँखों को पोंछता जाता था। मैंने यह पत्र किसी और को दिखलाना व्यर्थ समझा क्योंकि जो होना था वह तो हो चुका।

आज कल

उसे पढ़कर तो मेरा दिल टूक टूक हो गया। और कितना करुणाजनक दृश्य था। मैं अपने बिस्तर पर लेट गया। सारा दिन मुझे उसी तरह लेटकर बीत गया। दो एक महीने तक मेरी यही हालत रही। पर आप जानते हैं कि समय सबसे एक बड़ी दवाई है धीरे धीरे मेरी अवस्था सुधरने लगी और अब बिल्कुल ठीक हो चुकी है यद्यपि इस बात को बीते भी कई महीने हो गए पर अब भी मन में उसका अन्तिम स्मृति चिह्न वही पत्र जिसे जब मैं पढ़ता हूँ तो रह रह कर मन में से उठती वही तस्वीर और कि [illegible] [illegible] इति करती हुई सी प्रतीत होती है। मैं उसी बहन का आभारी [illegible] हूँ। इसलिए—

अपने मित्र की स्मृति को ताज़ा बनाये रखता हूँ।

—o—

कुलपिता की याद

लेखक - ब्र० शिव कुमार जी

एक वर्ष के बाद हम फिर अपने कुलपिता के बलिदान दिवस को मनाने जा रहे हैं। भविष्य के गर्भ में इस प्रकार के असंख्य दिवस विद्यमान हैं उनमें हम आप ने कुलपिता को किस प्रकार याद किया करेंगे, यह तो आगे देखा जायगा, किन्तु वर्तमान समय में तो वे हमें रह रह कर याद आते हैं।

सम्पूर्ण भारत में इस समय आग लगी हुई है। स्वतन्त्रता। स्वतन्त्रता। की आवाज चारों ओर से सुनाई पड़ रही है। स्वतन्त्रता का संग्राम भी अजीब है। एक तरफ तो सारी सेना अस्त्र शस्त्र से लैस है, दूसरी तरफ की सेना जो कि निहत्थी उसके हाथ में एक भी औजार नहीं। परन्तु युद्ध फिर भी जारी है। दोनों सेनाएं बखूबी एक दूसरे

का सामना कर रही हैं। एक ओर के सैनिक-लाठी चलाते हैं तो दूसरे खुशी २ अपना सिर आगे कर देते हैं, इस पर भी विजय की आशा इन्हीं को है। प्राकृतिक नियम फेल हो जाते हैं, अक्ल चकरा जाती है। आखिर यह तमाशा है क्या? कौनसी शक्ति है जिसके रवे पर निहत्थे सैनिक भी मैदाने जंग में उतर सकते हैं।

इसी शक्ति की खोज में हमें अपने कुल पिता की याद आ जाती है, क्यों कि उनका हमारे कुलपिता से — घनिष्ट सम्बन्ध है। वह शक्ति है 'ब्रह्मचर्य'। ब्रह्मचर्य को अहिंसा और सत्य का सुन्दर मेल कहा जाय तो अनुचित न होगा, लोग इसकी खिल्ली उड़ाते हैं। आधुनिक-युग में ब्रह्मचर्य का नाम लेना हंसी का विषय बन चुका है, पर हमारे कुलपिता ने इसकी जरा भी परवाह नहीं की उसने साबित किया कि भारत का एक २ बच्चा जब तक अपने में इस जीवनी शक्ति को स्थान न देगा, तब तक वह किसी भी काम को स्थिरता से न कर सकेगा। सभ्य-संसार —

जातियों की कमजोरियों को दूर करने में अनेक विध उपाय सोचा रहा है, पर इस ओर अब तक उसका ध्यान नहीं खिंचा। हमारा कुलपिता तो नामी हकीम था, उसने पहिले तो मर्ज को पहिचाना और मर्ज की एक दवाई भी बनाई। उस दवाई-को तैय्यार करने के लिये उसने एक Laboratory की स्थापना की, जो कि 'गुरुकुल' के नाम से प्रसिद्ध है व इसी को ही केन्द्र बना कर वह चाहता था कि भारत सन्तान में नवीन रक्त का संचार हो। यद्यपि वह Labortory पूरी तरह से चल नहीं पाई, किन्तु देखते देखते ही इसके उपकरणों को दूसरों को अपना लिया और उन का काम चल निकला। साबरमती का सन्त अभी हाल में ही उच्च शिखर पर चढ़ गया है। हम तो हाथ मसलते रह गये; किन्तु उसने तो उसी उपाय के द्वारा एक बार इंगलैण्ड के तख्त को हिला दिया। यही कारण है कि इस समय सत्याग्रह संग्राम पवित्र है। वह अन्त में सफल होगा क्यों कि इसमें ब्रह्मचर्य के सिद्धान्त का सुचारु रूप से पालन हो रहा है।

इतना ही नहीं। भारत का हृदय-सम्राट जेलखाने में बैठा हुआ भी शक्तिशाली सरकार को जो नाच नचा रहा है उसे अंग्रेज

लोग मरते दम तक भी न भूलेंगे प्रकार यह समझती है कि किसी भी आदमी को कैद करने पर उसकी सब क्रियाओं को बन्द किया जा सकता है। किन्तु इस जेल खाने के पक्षी के बारे में उसको अपनी बात पर सन्देह हो ~~जाता~~ जाता है। आज भी बापू को वही बात खटक रही है जो आज से कुछ दिन पूर्व हमारे कुल पिता को तो यह इस लिये खटकी थी कि वह हिन्दुस्तान में फूंक २ कर पांव धरते हैं। समय पर उन्हें, यह बात बहुत अखरी कि भारतीय लोग भी अपने घर में छूआ छूत की मर्यादा को जमा रखें। किन्तु बापू के सिर पर तो आपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा और उन्हें चेतना आई कि अछूतोद्धार के लिये उन्हें भी कुछ करके ही दिखाना चाहिये। वह तो एक बार ही समझने लगा कि या तो मैं ही इस संसार में जीवित रहूं या छुआ छूत, दोनों एक साथ नहीं रह सकते, अगर छुआ छूत रहती है तो महात्मा की जान जाती है। यदि महात्मा जी रहते हैं तो छूआ छूत की जान जाती है। अब देखें ऊंट किस करवट बैठता है। भारतीय जनता महात्मा जी के जीवन को अपना पथ प्रदर्शक बनाती है या छुआ छूत को।

क्या सचमुच भारतीय जनता अपने फकीर को गंवा देगी। छुआ छूत के सामने उसके देह की जरा भी परवाह न करेगी, जो

कि उसी की चिन्ता में घुल कर आधा हो चुकी है। ऐसे ही ओछे कारणों के लिये वह पहिले भी कई अमूल्य रत्न खो चुकी है। इस प्रकार कुल पिता भी इसी कारण इस संसार से उठ गया कि कुछ भारतीयों ने उसे भली भांति समझा न था। वह जो कुछ करना चाहता था लोग उसकी गहराई में नहीं पहुंचे। वह तो एक भारतीय को पक्का वीर बनाना चाहता था भारती में वह केवल हिन्दुओं को ही सम्मिलित न करता था उसके लिए तो भारत माता का हर एक पुत्र भारतीय था। कइयों ने उसे एक तरफा समझा, और भाग तमाम कर दिया। उन्होंने इतना भी नहीं सोचा कि किसी भी आन्दोलन की प्रतिक्रिया में बल होता है। कोई भी आन्दोलन अधिक वेग से चलाया जाता है यदि उस के विरोध में प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाय। खैर! कुल पिता तो गये, परन्तु भारत सन्तान कितनी भयभीत और असंगठित हो गई है इसका परिचय अभी मिल जायगा। सयाने लोग तो यही कहते हैं कि "दूध का जला छाछ फूंक फूंक कर पीता है" क्या भारतीय जनता अपने श्रद्धानन्द को खो कर अब भी न चेतेगी क्या वह अब भी उस

आज कल

बलिदान को जो कि आज से [illegible] ही वर्षों पूर्व हुआ, एक दम भूल जायगी? दुनियां में तो ऐसा कहीं देखने में नहीं आया। हां! भारत में क्यों कि पहले ऋषि मुनि लोग यज्ञ करते थे, उनका कामही था बड़े २ चमत्कार दिखाना। शायद उन्हीं का अनुकरण करते २ कर्तव्य-ति बाजी मार जांय। यदि मुनियों का कुछ पता तो चलता है नहीं न जाने कब क्या कर दें।

अगर यही बात है तो कुल पिता को किस लिये याद किया जाय उसका बलिदान यदि भारतीयों पर इतना भी असर न कर सके तो बात ही क्या बनी फिर तो उसे याद करना न करना एक ही बात है। क्या वह तीन गोलियां आज भी भारतीयों के दिलों पर — घाव नहीं करतीं जिन से कि कुल पिता की जान तक चली गई। — क्या वीर का वह जलूस आज भी भारतीयों के अन्दर जोश पैदा नहीं करता, जिसे देख कर लोगों ने आंसू बहाए थे। श्मशान की ओर जाते हुए लोगों के दिलों में जो भावनाएँ पैदा हुई थीं; क्या वही भावनाएं उन्हें [illegible]

नहीं आती। आग की लपटों ने सारे भारत को जो संदेश दिया था क्या वह बालू पर महल महल बनाने के समान ही ही बालू में मिल गया। क्यों फिर उस देश भी-भारत का दीपक जलाने वा महादेव प्रसन्न होंगे? क्यों न! वह महादेव भी तो अपने शरीर को राख से Painted रखते थे। हाय! शरीर को जला कर भी अगर भारतीय लोग उससे-कोई तत्व न निकाल सके तो उनसा भी कोई कृतघ्न होगा?

कुल पिता की सबसे बड़ी स्मृति यही होगी कि साबरमती का संत जो कुछ चाहता है, भारत संतान उसे आंखें मूंद कर मानती चली जाय वह किसी की अक्ल पर ताला नहीं लगाना चाहता, और नहीं किसी से जबरदस्ती ही कराना चाहता है। वह सबको सोचने का मौका देता है, पर सोचने पर भी यदि कोई अपने आचरणों को उसके अनुसार नहीं बनाता तो उसके लिये इससे बेहतर और हो ही क्या सकता है कि वह

आज कल

नेता ही माना जाय जैसा
ह वह करता है। आज
महात्मा 'महात्मा' ही हैं।
वह अब तक यदि भारत
की भलाई सोचता रहा है
तो आगे भी जारी रखे-
गा ऐसी आशा करो
कोई बुरा काम तो नहीं
[illegible] पिता के बलिदान-

दिवस के अव-
सर पर यही भाव यदि
भारतीयों के दिलों
में घर कर जाय, तो
उसकी याद का कुछ
फल भी निकले, नहीं
तो ऐसे दिन आते हैं
और चले जाते हैं।

- त्याग का उपदेश -

मैं उन दिनों गुरुकुल कांगड़ी की [illegible] श्रेणी में पढ़ता था [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हमारी परीक्षायें [illegible] हो हुआ करती थी। इस साल छुट्टी होने वाली और मुझे घर जाना चाहिये, [illegible] है। और [illegible] भी [illegible] आया, और हमने सोचा कि कहाँ कहाँ जाना चाहिये। हमने अनेक शहरों के नाम [illegible]

[illegible] आई। और उत्साह में [illegible] [illegible] और मास्टर साहब भी [illegible]

...दमा खाना खाता और फिर रोटी खाने जाता ... के घर भोजन के लिये चले गये।

(२)

सब लड़के भोजन खा कर अपने २ कमरे में और कोई २ कहानियें कह रहे थे दूसरी ओर कुछ गुफ्तगू हो रही थी, इसी प्रकार अनेक कमरों में बैठे हुए २ ब्रह्मचारी अपनी २ खेले खेल रहे थे और कोई २ उपन्यास ले रहे थे। इसी समय अचानक हमारे बड़े ही मास्टर जी पाखाने से लौटकर सीधे कमरे में आकर खड़े हुए और गम्भीराय खड़े हुए एक ब्रह्मचारी को कहने लगे कि जाओ उन दोनों को बुला लाओ।

हम दोनों उस समय एक जगह बैठे २ उन्हीं उमंगों में उड़ रहे थे कि सहसा देवदत्त ने कहा कि तुम्हें मास्टर जी ने बुलाया है।

यह कहकर वह तो अपनी खेल में लग गया, और इधर हम ने कहा कि हमें मास्टर जी ने किस लिये बुलाया है। उस समय हमें अपनी बातों में वह सब कुछ भूल चुका था। हम तो यही सोच रहे थे कि 'दिल्ली में अनेकों लाल किले देखेंगे कुतुबमीनार के ऊपर चढ़कर तो हम सबसे बड़े हो जायेंगे, जमुना जी में नाव की सैर करते जाया करेंगे' इत्यादि बातें तो हमारी सभी समाप्त हो गईं, और हम दोनों मास्टर जी के पास पहुंचे। उनके प्रश्न का उत्तर देना उस समय बड़ा कठिन था, किन्तु फिर भी कुछ फिर का अंदेशा निश्चित नहीं हुआ था अतः हमने कहा कि हमने तो नहीं किया जी। बस यह सुनते ही वे हम दोनों को पकड़ कर पिता के पास ले गये और कहने लगे कि आज ये दोनों स्कूल में नहीं आये और यही इन्होंने पीछे फिर घर पर भी तो अपने उल्टे पांव चल दिये, और हमारे कुलपिता पूछने लगे कि 'कहो तुम कहां थे?' मैंने कहा कि बाग में थे। उन्होंने फिर पूछा

कहानियां कह रहे थे। हमने आदि से अन्त तक सब बात कह दी. आखिर और फिर का कहते उन्होंने हमें समझाया और फिर भेज दिया। हम फिर आकर मौज करते हुए निडर होकर दादी की गोद में लोटने लगे।

(3)

मध्याह्न के दो बजे होंगे। मैं अपने मित्र के पास गया और कहने लगा कि पत्र लिख दिया, वह कहने लगा कि "मैं तो कल से यही सोच रहा हूँ कि क्या लिखूं छुट्टी कैसे मिलेगी" मैंने भी उसी की बात को दोहराते हुए कहा कि भाई मैं भी यही सोच रहा हूँ कि इतने में मेरा मित्र बोल उठा कि भाई कारण तो मिल गया मेरे पूछने पर उसने कहा कि "एक बात की जानते हो कि भतीजे ने पिताजी से [illegible] जी ते रही विवाह में शुरू रहे थे तो [illegible] ता जी ने कहा था कि छुट्टी के लिये तो आज [illegible] जवाब है और वह यह कि, घर में दादी और नानी बिना लिये रहती हैं। यह सुनकर हमने अपने [illegible] लिखे और उसमें लिख दिया कि छुट्टी कर [illegible] घर में मेरी नानी और दादी हैं।

इस प्रकार लिखकर हम पत्र तो डाकखाने में दे आये। चिट्ठी पहुंची और 20 दिन [illegible] बाद हम दोनों के पिताजी का पत्र आया।

(4)

छुट्टी मिल गई थी। हम दोनों ने बिस्तर बांधकर तैयार थे। कुल पिता से आज्ञा ली और उनके आशीर्वादों के साथ हम चल दिये। रास्ते में हम दोनों आपस में तथा हमारे पिता[illegible] आपस में एक दूसरे का पत्र पढ़ कर चले जाते हुए जा रहे थे, कि हम दोनों जोर से हंस पड़े। हमारी हंसी सुनकर उन्होंने पूछा और हमने अपना निश्चय बतला दिया। साथ ही उनके उत्तर की बिना प्रतीक्षा किये ही मैंने कहा कि यही

आज कल

...ा मैं अपने घर लेता जाना। किन्तु वह बात
...ने नहीं मानी और कहा कि पहले यह
घर ही आयेगा फिर अपनी माता से मिल कर
तुम्हारे घर आजायेगा। और यही निश्चय हुआ
कि १५ दिन बाद वह मेरे घर आजायेगा।

(५)

सहारनपुर का स्टेशन था। जहां से
हम दोनों गाड़ियें बदलती थी अत वह हमसे
यहां अलग होना था।

प्लेट फोर्म के उस ओर उसकी गाड़ी तथा
इस ओर हमारी खड़ी थी। दोनों हमारे सामने
वाले डिब्बे में ही बैठे थे। उस समय हमें
यही विचार बड़े उद्विग्न कर रहे थे कि
दोनों गाड़ियों ने सीटी दी और वह उधर
और मैं इधर, और देखते ही देखते मिनटों
में एक दूसरे से ओझल हो गये।

(६)

आज है ४ अक्टूबर का दिन है। मैं
उसके गांव से आने की बाट जोह रहा था।
सवेरे से सायंकाल तक उसी की बाट देख
रहा था। उसके आने की खुशी में मैं तेरी
बाहर [illegible] गया। माताजी ने रोटी
खिलाई और कहा कि वह शाम को आजायेगा।
मेरी माताजी उसे पहले भी जानती थी क्यों कि
जाते वक्त मैं उसे अपने घर ले गया था।
शाम के लिये माताजी ने बड़े प्रेम से हम
दोनों के लिये हलवा पूरी बनाया।

सायंकाल के ५ बजे होंगे मैं [illegible]
बाहर ही खड़ा ही था कि बाहर से आवाज
आई [redacted] विजय। मैंने उसकी आवाज
पहचानी और भाग कर लिपट गया, और हम
दोनों अन्दर गए मैंने उसे पिताजी को भी
मिलाया। उसने हाथ जोड़ कर प्रणाम किया

थी, कि इतने में मेरे पिता जी आगये।

वे दोनो आपस में बाते करते रहे। मैं उसे लेकर माता जी के पास आया। क्यों कि मैं माता जी का सबसे बड़ा तथा सबसे छोटा लड़का मैं ही था, इसलिये वे उसे भी पुत्रवत् ही समझती थीं।

उसके पिता जी को जरूरी काम था, सो वे तो भोजन खाकर अगली ही गाड़ी से लौट गये। और हमने सात अक्तूबर को दिल्ली जाने का निश्चय किया।

(७)

संसार व्यापी महायुद्ध अभी समाप्त ही हुआ था। भारत में रौलेट-एक्ट लग चुका था। जगह जगह भारतीय नेता उसका अपमान कर रहे थे और उसके बॉयकॉट के लिये जगह २ जलूस निकाल रहे थे। उस समय सारा भारत एक स्वर में उसका विरोधी था। किन्तु हमारे दयालु शासक भी भारतीयों की स्वामि भक्ति तथा वीरता के परिणाम कुछ न कुछ देना अवश्य चाहते थे अत: उन्होंने अपने स्व[illegible] का बहुमूल्य रौलेट-एक्ट का हीरा भेंट कर दिया। किन्तु हम उस हीरे को लेना नहीं चाहते थे। किन्तु दयावान अंग्रेज लोग बिना दिये मानते कहां थे। इसलिये उन्होंने राजधानी दिल्ली में अपनी सेना को इसी लिये खड़ा कर रक्खा था। और ये आज्ञा दे रक्खी थी कि जो इसका स्वागत न करे उसे मार डालो।

(८)

८ तारीख को प्रात: काल हम दिल्ली पहुंचे। हम स्टेशन पर उतर कर सीधे धर्मशाला में गये वहां एक बढ़िया सा कमरा किराये पर लिया।

दिल्ली की चहल पहल को देख कर हमें बड़ा आश्चर्य होता था कि हम किस दुनियां में आ गये हैं। हमने एक-एक कर के दिल्

...भी, सब प्रसिद्ध स्थानों को देख लिया ...ते और उस पर किन स्वाई मिले ...ते हुए २० दिन लगा दिये। फिर दिल्ली से लौटने का समय आ गया था। ...दो एक दिन शेष थे।

(८)

आज हमने पिता जी से कहा कि अब लौटने के दिन आ रहे हैं। आज एक बार फिर चांदनी चौक दिखाओ। उन्होंने स्वीकार कर लिया और हम भोजनालय विश्राम करके चांदनी चौक की ओर निकले। बाहर निकलते ही हमें दिल्ली श्मशान सी निःशब्द दिखाई पड़ी। हम बड़े आश्चर्य में थे कि फिर भी बात क्या है। देखते २ हम चांदनी चौक की ओर निकल गये। वहां क्या देखते हैं कि अपनी बन्दूकों को कंधे पर रखे हुए सिपाही कतार में खड़े हैं और घोड़े पर घूमते हुए अपने नायक को नमस्कार कर रहे हैं। और किसी आदेश को पाने की इच्छा से बिलकुल तय्यार खड़े हैं।

दूसरी ओर बड़े जोर के नारों से भारत के नेताओं की जयध्वनियों से आकाश गूंज रहा था। मानो आज भारतीय किसी त्योहार को मना रहे हैं। देखते ही देखते दिल्ली की सारी जनता जलूस रूप में आ निकली। उस जलूस के सब से आगे भारत का वस्त्रधारी दण्ड हाथ में लिये लम्बा चौड़ा मनुष्य मानो संसार को परास्त करता हुआ निःशंक चला आ रहा था। हम सोचने लगे कि कोई युद्ध होने वाला है जिसमें एक ओर सशस्त्र सैनिक तथा दूसरी ओर निश

भारतीय वीर थे। इस युद्ध को देखने की इच्छा से हम भी एक तरफ खड़े हो गये।

थोड़ी देर में सशस्त्र सैनिकों को अंग्रेज सेनापति के सामने से आते हुए जलूस की ओर इशारा करते हुए कहा कि 'Halt' किन्तु जलूस उसकी आज्ञा को न सुनता हुआ आगे बढ़ता ही गया। किन्तु थोड़ी ही देर में उसी नवयुवक की आज्ञा से जलूस वहीं ठहर गया। और वह युवक आगे बढ़ता हुआ, उसी सैनिक की बन्दूक के सामने जाकर खड़ा हो गया और कहने लगा कि:- यदि तुमने जनता पर गोली चलानी है तो प्रथम मेरे सीने को गोली से भर दो उसके बाद तुम्हें उस आज्ञा पालन करने का अधिकार है। यह शब्द सुन कर उस नवयुवक के सीने को देखने के लिये बन्दूक तय्यार ही थी [illegible] आवाज फिर आई कि Hal[illegible] सैनिक ने उधर मुंह करके [illegible] देखा कि अंग्रेज सेनापति घोड़े को दौड़ा[illegible] हुआ और Halt कहता हुआ आ रहा है। [illegible] एकदम रुक गया। आते ही पल में [illegible] सेनापति वहां आकर खड़ा हो गया और कहने लगा कि " इस नवयुवक पर बन्दूक न चलाना। उधर से शब्द और इधर जलूस में से जय ध्वनियें आ रही थीं।

* एक कहता था कि बोलो " स्वामी आनन्दकन्द जी महाराज की जय " तो दूसरी ओर से आवाज आती थी कि - " श्री आनन्द आ रहे "---

(१०) मैं जो एकान्त में खड़ा हुआ था यह सब दृश्य अपनी आंखों से देख रहा और सुन रहा था। "आनन्द" नाद सुन कर चौंक उठा। और फिर जो एक बार नवयुवक की तरफ दृष्टि उठाकर जो देखा कि वह ही कुलपति अभी (७) शान्ति की तरह अपने त्याग का उदाहरण रहे।

(८). सच्चा हक जो देने वाले दिव्य शक्ति।

गुरुकुल समाचार.

ऋतु आम है, सर्दी जोर से पड़ने लगी है। ब्रह्मचारियों के स्वास्थ्य उत्तम हैं। चिकित्सालय प्रायः खाली रहता है। पञ्चम श्रेणी के कुछ ब्रह्मचारियों को खसरा हो गया था आशा है वे शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ करेंगे। ब्र० कृष्णदत्त इस श्रेणी की टांग टूट गई थी परमेश्वर की कृपा से वह भी स्वास्थ्य लाभ कर रहा है। कनखल तथा हरिद्वार में प्लेग होने के कारण यह खतरा बना रहता था कि कहीं इसका प्रवेश कुल में न हो जाय अतः सबको प्लेग के टीके लगवा दिये गये हैं जिसके कारण यह भय दूर हो गया है। लाहौर में चेचक फैली हुई है। कुछ अधिकारियों का आनागमन होने के कारण यह भय था कि कहीं यह रोग यहां न हो जाय इसलिये छोटे बच्चों को चेचक के टीके भी लगवाये गये हैं।

[illegible] -: [illegible]

हैं। आपके इस काल में भी – जिसमें कि संस्थाओं के लिये अनुपयुक्त प्रतिकूल सा रहा है – यद्यपि असाद प्रदर्शित किया है। गुरुकुलीय [illegible] यथावत् आपके प्रयास से ही सफलता पूर्वक सम्पन्न हुई है। ~~इसके अतिरिक्त [illegible] [illegible] [illegible] में हिन्दी विवादों में जाने के लिये ब्रह्मचारियों को कुछ अवसर मिलता है।~~

इस वर्ष कुल के प्रतिनिधि दो हिन्दी विवादों में भाग लेने के लिये गये। प्रथम पटना के विवाद में ब्र॰ नित्यानन्द जी तथा ब्र॰ सत्यपालजी चतुर्दश भाग लेने के लिये गये परन्तु दुर्भाग्य वश यह विवाद ही नहीं हुआ। दूसरा विवाद बनारस विश्वविद्यालय में होने वाला था। इसमें भाग लेने के लिये ब्र॰ नित्यानन्द जी चतुर्दश तथा ब्र॰ वेदव्रत जी त्रयोदश भेजे गये थे। हर्ष का विषय है कि इस वर्ष कठोर मुकाबले के होते हुए भी विजय कुल के प्रतिनिधियों की ही रही। ब्र॰ वेदव्रत जी प्रथम रहे। कुल में वापिस लौटने पर इन भाइयों का यथोचित स्वागत किया गया तथा हर्ष मनाया गया। हम यह आशा करते हैं कि कुलवासी इस विजय को आगे भी बनाये रखेंगे। यह ट्राफी [illegible], विजयोपहार कुल में इसकी बार आया है।

संस्कृतोत्साहिनी-: यद्यपि इस वर्ष इसका कोई भी साधारणाधिवेशन नहीं हुआ तथापि ब्र. वासुदेव जी अष्टादश - जो वर्तमान मन्त्री हैं - बनारस में होने वाले संस्कृत वादविवाद में भाग लेने के लिये कुल. के प्रतिनिधि भेजने में पर्याप्त उत्साह प्रदर्शित किया है। विवाद में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों के चुनाव के लिये सभा हुई। जिसमें ब्र. चन्द्रगुप्त जी एकादश प्रथम रहे तथा द्वितीय का निर्णय न हो सका कि कौन जाय। ब्र. भगवद्दत्त जी तथा ब्र. बालकृष्ण जी के विषय में विवाद था। अतः सायंकाल इसके निर्णय के लिये पुन. सभा हुई जिसमें ब्र. सत्यपाल जी चतुर्दश ने भी भाग लिया और वे ही इस प्रतियोगिता में जाने के लिये निर्वाचित हुवे। हमारी सम्मति में दूसरी बार सभा का होना ठीक न था। उन्हीं भाइयों को विवाद में सम्मिलित होने के लिये भेजना चाहिये जो यहां पर भी नियत समय पर प्रतिस्पर्धा में भाग लें। हर्ष का विषय है कि वहां की जनता पर दोनों बन्धुओं ने गुरुकुल की धाक जमा दी तथा ब्र. चन्द्रगुप्त जी तो द्वितीय पुरस्कार भी जीत लाये।

साहित्य परिषत्-: इसके मन्त्री श्री शीलेन्जी चतुर्दश हैं। आप ने इस वर्ष बहुत कम उत्साह दिखाया है। अभी तक 1.2 व्याख्यान कराये हैं आशा है मन्त्री जी अब और अधिक उत्साह प्रदर्शित करेंगे।

आयुर्वेद परिषद् -: इसके मन्त्री ब्र. प्रभाकर जी महोदय हैं। इस वर्ष जन्मोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया गया। मन्त्री जी ने उत्साह प्रदर्शित, परन्तु इस वर्ष आरम्भ गत वर्षों की अपेक्षा कम हुवे क्या हम आशा मन्त्री महोदय इस ओर भी प्रगति शील होंगे।

वाग्विकासिनी - तथा वाग्विलासिनी -: जिस उत्साह के साथ इन सभाओं का प्रारम्भ हुवा था यद्यपि वह उत्साह अब नजर नहीं आता परन्तु इतने थोड़े से समय में इन सभाओं ने पर्याप्त सफलता प्राप्त कर ली है। इसी का फल है कि बनारस विश्वविद्यालय में भाग लेने के लिये जाने वाले प्रतिनिधियों में तृतीय तथा ~~वर्तमान वाग्वर्धिनी~~ सभा के वर्तमान मन्त्री ब्र. सूर्यकान्त जी यहीं सभाओं के सब भूतपूर्व सदस्य हैं। हम मन्त्रियों का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहते हैं कि वे फिर से नवीन उत्साह के साथ इन सभाओं को चलाने में उत्साह प्रदर्शित करें।

खेल -: इस वर्ष क्रीड़ामन्त्री श्री त्रिवेदी जी महोदय हैं। इस अवसर पर उनका वर्ष समाप्त होने वाला है। आपने खेल को प्रोत्साहित करने में कोई ~~कम~~ विशेष उत्साह प्रदर्शित नहीं किया है। इस वर्ष यद्यपि 'श्रद्धानन्द हाकी टूर्नामेन्ट' की आयोजना की गई थी परन्तु

...गी.को लिये कोई विशेष तय्यारी नहीं की गई। टूर्नामेन्ट ज्यों ज्यों समीप आता गया त्यों त्यों ब्रह्मचारी क्रीड़ाक्षेत्र में कम संख्या में उपस्थित होने लगे। क्रीड़ामन्त्री महोदय को इस ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। श्रद्धानन्द टूर्नामेन्ट २१ दिसम्बर से प्रारम्भ हो गया है व इस वर्ष इसमें ११ दल सम्मिलित हुये हैं।

इसी विभाग के अध्यक्ष ब्र. विद्यानन्द जी यथोदय चुने गये हैं जो कि यथाशक्ति उत्साह प्रदर्शित कर रहे हैं।

इस वर्ष श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर अथर्ववेद यज्ञ की आयोजना की गई है। जिसमें चारों वेदों का पाठ हुआ। आज उसमें पूर्णाहुति दी जायगी।

आज श्रद्धानन्द बलिदानोत्सव है। इस अवसर पर श्री पूज्य आचार्य जी कुल में उपस्थित नहीं हैं। हमारी पूज्य आचार्य जी से सादर विनम्र प्रार्थना है कि यदि आचार्य जी ऐसे महत्वपूर्ण अवसरों पर स्वयं हमारे बीच में उपस्थित हो हुआ करें तो अत्युत्तम होगा।